ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

माघ-फाल्गुन, संवत् नानकशाही ५४१

फरवरी 2010 वर्ष ३ अंक ६

संपादक *सहायक संपादक*

सिमरजीत सिंह सुरिंदर सिंह निमाणा

एम. ए., एम. एम. सी. *एम. ए. (हिंदी, पंजाबी), बी. एड.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव

धर्म प्रचार कमेटी

(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग **303**

संपादन विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

*पत्रिका प्राप्त न होने पर तथा चंदे आदि सम्बंधी जानकारी प्राप्त करने के लिए मोबाइल नं. **98886-38618** पर सम्पर्क किया जा सकता है।*

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

फलगुणि अनंद उपारजना हरि सजण प्रगटे आइ ॥
संत सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ ॥
सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ ॥
इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ ॥
मिलि सहीआ मंगलु गावही गीत गोविंद अलाइ ॥
हरि जेहा अवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ ॥
हतलु पलतु सवारिओनु निहचल दितीअनु जाइ ॥
संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमै धाइ ॥
जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ ॥
फलगुणि नित सलाहीऐ जिस नो तिलु न तमाइ ॥१३॥ *(पन्ना १३६)*

पंचम सतिगुरु श्री गुरु अरजन देव जी महाराज फाल्गुन मास के उपलक्ष्य में उच्चारण की गई इस पावन पउड़ी में इस मास की ऋतु तथा वातावरण एवं लोक-सभ्याचार की पृष्ठभूमि में जीव-स्त्री को प्रभु-नाम की सच्ची स्तुति गायन करके मनुष्य जीवन सफल करने का महामार्ग बख्शिश करते हैं।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि फाल्गुन मास में जब अत्यंत शीत ऋतु चली जाती है और लोग खुशियां मनाते दृश्टव्य होते हैं। उस समय सौभाग्यशाली जीव स्त्रियों को प्रभु-मिलाप की इच्छा तथा उम्मीद लगती है। संत अथवा गुरु उनका प्रभु के साथ मिलाप का अपनी कृपालु अगुआई से सबब बनाते हैं। उस जीव-स्त्री की जीवन रूपी रात अब सारी सुखमयी हो जाती है, अब दुखों का ग्रास नहीं बनती। उन सौभाग्यशाली जीव-स्त्रियों की इस प्रकार इच्छा पूर्ण होती है और उनको प्रभु-रूप राजा पति मिल जाते हैं। वे अपनी सखियों के संग-साथ में जब प्रभु की उपमा के ही गीत गाती है और उन्हें प्रभु-पति से अतिरिक्त अन्य कोई दृश्टव्य ही नहीं होता। वह किसी अन्य दूसरे को भाव सांसारिक ख्याल आदि को अपने मन-मस्तक में जगह ही नहीं देती।

ऐसे वे जीव-स्त्रियां अपना यह लोक और परलोक दोनों संवार लेती हैं। उनको सदीवी सुख-शांति की मानसिक-आत्मिक स्थिति प्राप्त हो जाती है। वे संसार सागर में डूबने से बच जाती हैं और पुन: जन्म-मरण के चक्र में नहीं पड़तीं अथवा जीवन-मुक्त हो जाती हैं। हम मनुष्य मात्रों को चाहे एक जीभ ही मिली है परंतु प्रभु के अनेक गुण इस एक जीभ द्वारा गायन किये जा सकते हैं। इसके लिए हमें सतिगुरु की शरण में जाना होता है। फाल्गुन मास में हमको सदैव उस प्रभु की स्तुति करनी चाहिए जिसको अपनी स्तुति की तनिक-सी भी इच्छा नहीं है। यहां

गहरी रमज़ है कि प्रभु की स्तुति करना हमारे अपने हित में है। यह हमारा कोई प्रभु के सिर अहसान नहीं है। प्रत्येक पल प्रभु की सच्ची स्तुति में लगकर ही जीवन अर्थपूर्ण हो सकता है। समस्त मानव जीवन-रूप फाल्गुन मास प्रभु-स्तुति के अनुकूल है।

जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे ॥
हरि गुरु पूरा आराधिआ दरगह सचि खरे ॥
सरब सुखा निधि चरण हरि भउजलु बिखमु तरे ॥
प्रेम भगति तिन पाईआ बिखिआ नाहि जरे ॥
कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे ॥
पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे ॥
माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे ॥
नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे ॥१४॥१॥ *(पन्ना १३६)*

सतिगुरु जी बारह माहा मांझ की इस अंतिम पउड़ी में प्रभु-नाम के महातम और इस पावन बाणी का मूल प्रयोजन दर्शाते हुए मनुष्य-मात्र को नाम-बाणी द्वारा प्रभु-नाम से जुड़कर अमूल्य मनुष्य-जन्म का मूल उद्देश्य सफल करने का मार्ग बख्शिश करते हैं।

गुरु जी फरमान करते हैं कि जिस-जिस मनुष्य ने प्रभु-नाम का ध्यान किया उस-उस के ही उद्देश्यपूर्ण बड़े काम पूरे हुए, जिस-जिस ने पूर्ण गुरु के माध्यम से परमात्मा को याद किया वही रूहानी दरबार में सच्चा व खरा सिद्ध हुआ। सभी सुखों अथवा रूहानी सुखों के खजाने रूप हरि-चरणों से जुड़कर भय के कठिन सागर से पार हुआ जा सकता है। नाम से जुड़ने वाले को प्रेम-भक्ति की ऊंची वस्तु मिल जाती है। वह माया रूप विष को नहीं सहन् करता। झूठे लालच रूपी झूठों से वह छूट जाता है, उसकी अनिश्चितता दौड़ जाती है और वह प्रभु-नाम-रूप सत्य में भरपूर हो जाता है। वह परमात्मा को सदैव मन-अंतर में टिकाकर रखता है।

जिस पर परमात्मा की कृपा-दृष्टि है उसके सभी महीने, दिन, मुहूर्त आदि अच्छे ही हैं अर्थात् परमात्मा की कृपा ही जीवन की सफलता का आधार है। इसलिए गुरु जी कथन करते हैं कि हे प्रभु! मुझ पर भी कृपा-दृष्टि करो और मुझे अपने दीदार की ऊंची वस्तु बख्श दो।

रविदासु चमारु उसतति करे हरि कीरति निमख इक गाइ ॥
पतित जाति उतमु भइआ चारि वरन पए पगि आइ ॥

रविदासु ढुवंता ढोर नीति तिनि तिआगी माइआ ॥
परगटु होआ साधसंगि हरि दरसनु पाइआ ॥

संपादकीय

अब्दाली के मंद इरादों का प्रतिरूप : बड़ा घल्लूघारा

सिक्ख धर्म संसार का सबसे बाद में प्रकट होने वाला आधुनिकतम धर्म है। यह धर्म नये-निराले उसूलों का संग्रह होने के कारण सत्तावादियों को अपने लिए एक बड़ी चुनौती के रूप में प्रतीत होता रहा है। इस धर्म का तो जन्म ही सच को पूर्णत: स्थापित करने हेतु हुआ था। इसकी स्थापना के समय झूठ का बहुत बोलबाला हो चुका था। झूठ को पछाड़ने के लिए और सच को पुनर्स्थापित करने के लिए सिक्ख धर्म के संस्थापक और प्रवर्त्तक गुरु साहिबान को बहुत बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। उनके पद-चिन्हों पर चल कर उनके नाम-लेवा सिक्ख भी बहुत बड़े साहस और सिदक के साथ हक-सच की पुनर्स्थापना हेतु हरेक सूरते-हाल में क्रियाशील रहे। इस संदर्भ में कई सदियों तक सिक्ख पंथ को घल्लूघारों, जनसंहारों, कत्लोगारतों, नस्लकुशियों और अत्यंत भीषण जंगों-युद्धों आदि का सामना करना पड़ा। क्या विदेशी मूल के शासक और क्या विदेशी आक्रमणकारी, चाहे वे परस्पर वैर-भाव भी रखते रहे, सिक्खों की जान के वैरी वे दोनों ही थे। सिक्ख जुल्म-जब्र के विरुद्ध संघर्ष करते हुए भी किसी कौम या समुदाय के विरुद्ध कदापि वैर-भाव न रखते हुए सरबत्त का भला ही मांगते तथा करते रहे। दुख एवं खेद की बात यह है कि राजाशाही का दौर बीत जाने और लोकतंत्रीय व्यवस्था आ जाने पर भी सिक्ख पंथ के विरुद्ध वैर-भाव का सिलसिला आज भी जारी है, जिसकी बहुत बड़ी मिसालें जून १९८४ ई. का श्री हरिमंदर साहिब और श्री अकाल तख्त साहिब, श्री अमृतसर पर सैनिक आक्रमण और नवंबर १९८४ में दिल्ली, कानपुर, जमशेदपुर, बोकारो तथा कलकत्ता आदि नगरों में तत्कालीन शासक दल की देख-रेख तथा उसकी शह पर सिक्ख समुदाय के कत्लेआम के रूप में देखी जा सकती हैं। हक-सच के लिए सिक्ख-संघर्ष आज भी जारी है।

सिक्ख पंथ के संघर्षों के साथ भरपूर इतिहास में 'बड़ा घल्लूघारा' एक कभी न भूल सकने वाला ऐतिहासिक कांड है। यह युद्ध होकर भी सिक्ख समुदाय को खत्म करने के नापाक इरादों सहित एक बहुत बड़ा जनसंहार था। वक्त की मुगल हकूमत तो पहले ही सिक्खों को समाप्त करने पर तुली हुई थी। इसके साथ-साथ विदेशी अफगान आक्रमणकारी अहमदशाह अब्दाली भी सिक्खों की जान का दुश्मन बन गया। अफगान लुटेरे हमारे देश की न केवल आर्थिक रूप से लूटमार कर रहे थे, बल्कि देश की अजमत स्त्री-वर्ग का भी घोर अपमान कर रहे थे। वे सुंदर स्त्रियों पर विशेष रूप से अपना जन्म-सिद्ध अधिकार समझते थे। भारतीय पुत्रियों को बंदी बनाकर अपने मूल देश काबुल ले जाते तथा वहां बड़े स्तर पर उनको बेच देते। सतिगुरों द्वारा दी गई देश-भक्ति तथा आत्म-सम्मान की जन्म-घुट्टी से साहिबे-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज द्वारा सजाये खालसा पंथ को यह बात बहुत रड़कती थी। खालसा पंथ अब समय के हालात के रूबरू देश में खालसा राज स्थापित करने के लिए प्रयासरत था ताकि लोगों को चिरकाल की बहुपक्षीय परतंत्रता से निजात मिले, जन-साधारण अमन-चैन से रह सके। इसी मनोभाव के धारक

होते हुए गुरु कलगीधर के सिंघों ने सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया के नेतृत्व में दो बार अफगान लुटेरों द्वारा न केवल बहुत से लूट के माल को लूट लिया बल्कि उनके शिकंजे से बंदी बनाई सैंकड़ों स्त्रियों को छुड़ा कर उनको सम्मान सहित उनके घर पहुंचाने का महान कारनामा भी किया। इस कारनामे से चिढ़कर अधर्मी अफगान आक्रमणकारी अहमदशाह ने सिक्खों के विरुद्ध बड़े स्तर पर कारवाई करने की ठान ली।

अब्दाली के तीव्र गति से आने की सूचना सिक्खों को मिल गई। समय बहुत ही कम था। ऊपर से तत्कालीन मुगल शासक भी सिक्खों के विरुद्ध क्रियाशील थे। इस प्रसंग में सिक्ख एक बड़े समूह के रूप में रह रहे थे। कुछ नामवर सिक्ख अगुओं के नेतृत्व में जहां कुछ गिनती में सिंघ भी थे वहां अधिक संख्या में समूचे सिक्ख परिवार थे, जिनमें स्त्रियां, वृद्ध और बच्चे अधिक संख्या में थे। यह समूह उस समय समस्त सिक्ख समुदाय जैसा लगता था और अब्दाली के गुप्तचरों ने उसे इस एकत्रित समूह के बारे में बताया हुआ था।

मारोमार करते हुए अफगान आक्रमणकारी अपनी शिक्षित सेना के साथ महीनों में तय हो सकने वाली दूरी दिनों में तय करके ३ फरवरी, १७६२ को लाहौर पहुंच गये। वहां से भी तुरंत कूच करके ५ फरवरी को मलेरकोटला के पास चल रहे सिक्ख समूह पर बहुत भीषण आक्रमण किया गया। सिक्ख सरदारों व जरनैलों ने सिक्ख जनसमूह को आक्रमणकारियों के आक्रमणों से बचाने के लिए तत्काल ही काफी अच्छी योजनाबंदी की। उन्होंने लड़ने वाली सिक्ख सेना को एक कवच की हैसीयत प्रदान की और बरनाला की तरफ बढ़ना जारी रखा। सिक्ख सेना की कमान बहुत ही अनुभवी एवं बहादुर सिक्ख जरनैल सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया के हाथ थी। अनगिनत सिंघों ने शहीदी जाम पिये। वैरी आक्रमण पर आक्रमण किये जा रहा था। स्थानीय सूबेदारों ने अब्दाली की सेना में अपनी सेनाएं भेज कर और अधिक बढ़ोत्तरी कर दी। इस प्रकार जिन सिंघों को कभी पछाड़ा न जा सका था वे संख्या में बहुत कम रह जाने से अधिक समय न टिक पाये। परिणामस्वरूप बेउसूले अफगान आक्रमणकारियों ने युद्ध-विधान के सभी अच्छे उसूलों को ताक पर रखते हुए सिक्ख बच्चों, स्त्रियों और वृद्धों का बेदर्दी से संहार किया। यूं बहुत संख्या में सिंघों के अतिरिक्त हजारों सिक्ख बच्चे, स्त्रियां और वृद्ध भी इस घल्लूघारे में शहीद हो गए। यह क्षति बहुत बड़ी कौमी क्षति थी। इसे सिक्ख समुदाय के वर्णनकारों ने ही नहीं बल्कि पक्षरहित इतिहासकारों ने भी 'बड़ा घल्लूघारा' के नाम से वर्णन किया है। इस घल्लूघारे में सिक्खों की अथाह कौमी क्षति तो हुई परंतु अब्दाली के, सिक्ख पंथ का नामो-निशान मिटाने के मंद इरादे समूर्त न हो पाये। आने वाले समय में सिक्ख मिसलों ने और अधिक राजनैतिक शक्ति विकसित की और उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ में तो महाराजा रणजीत सिंघ के नेतृत्व में एक बहुत बड़ा लोक-कल्याणकारी खालसा राज्य भी स्थापित करने में सफलता मिल गई। समीकरण कैसे बदले, इसका एक प्रमाण बहुत प्रसिद्ध है कि महाराजा के जरनैल सरदार हरी सिंघ नलुआ के नाम से अफगान अपने देश में रहते हुए भी कांपने लगे और अफगान स्त्रियों ने अपने बच्चों को चुप कराने हेतु यह उक्ति ईजाद की, "चुप रे शोरा! हरिया रागले।" भाव "बच्चे! चुप हो जा, वरना हरी सिंघ नलुआ आ जाएगा!"

गुरु नानक देव जी का मार्ग अर्थात् सिक्ख धर्म एक वैज्ञानिक धर्म है

*-स. गुरबख्श सिंघ 'प्यासा'**

धर्म और विज्ञान साधारणत: एक दूसरे के विरोधी माने जाते हैं, परन्तु जब बात श्री गुरु नानक देव जी के मार्ग और विज्ञान की हो तो स्थिति एकदम बदल जाती है, क्योंकि वे एक-दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि एकासुर हैं।

जैसे कि विज्ञान का उद्देश्य तथ्यों को ठोस प्रमाणों द्वारा सत्यापित करना है, तो श्री गुरु नानक देव जी का मार्ग ही नहीं, लक्ष्य भी सत्य को आत्मसात करना है। उसका ध्येय है कि मनुष्य सत्याचारी बन कर जीवन-यापन करता हुआ, पूर्ण सत्य अर्थात् सृष्टि-कर्ता के तदारूप हो सके। इसी लिए सिक्ख धर्म हर प्रकार के भेदभाव, वहमों, भ्रमों एवं पाखंडों आदि को नकारता है। गुरमति एक निराडंबर जीवन-युक्ति है, इसलिए इसके विचार और व्यवहार अर्थात् कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं। यथार्थ में जो धारण न किया जा सके उसे धर्म की संज्ञा भी कैसे दी जा सकती है?

यह श्री गुरु नानक देव जी की चिरंतन सत्य पर आधारित, वैज्ञानिक सोच ही थी कि एक आदर्श समाज के नवनिर्माण हेतु, समाज की इकाई, मनुष्य को पूर्ण मनुष्य के रूप में ढालने के लिए एक ओर उसे समाज उन्मुख तो दूसरे छोर पर उसके ईश्वरीय अंश होने के बोध को दृढ़ करवाते हुए, ईश्वरमय होने का व्यवहारिक मार्ग दर्शाया।

उपरोक्त लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उन्होंने जो तीन सरल सूत्र दिए वे अपने आप में अद्वितीय हैं: (१) किरत करो (सत्य और हक् की कमाई) (२) नाम जपो (ईश्वर को सदैव याद रखो) (३) वंड छको (मिल-बांट कर खाओ)।

इन्हें व्यवहारिक रूप देने के लिए 'संगत' अर्थात् मानवता की सेवा को समर्पित, आस्तिक, भले पुरुषों की संगत और 'पंगत' अर्थात् सत्य और हक् की कमाई से, बिना किसी भेद-भाव के 'सांझे लंगर' (जिन्हें प्रो. पूरन सिंघ ने 'TEMPLE OF BREAD' की संज्ञा दी है) का प्रावधान किया।

सही अर्थों में 'सांझीवालता' का प्रतीक अर्थात् बराबरी और बंधुत्व की भावना से ओत-प्रोत समाज का निर्माण।

इतिहास साक्षी है कि उन्नीसवीं सदी में 'कार्ल मार्क्स' ने आध्यात्मिक तत्व को नकारते हुए सामवाद का परचम फहराया।

जैसे कि हम भली-भांति जानते हैं कि विज्ञान, केवल 'पदार्थ' अथवा 'पदार्थवाद' से सरोकार रखता है, इसलिए उसके सब क्रिया-कलाप पदार्थ के इर्द-गिर्द ही परिक्रमा करते हैं। श्री गुरु नानक देव जी की दिव्य-दृष्टि किसी साधारण विज्ञानी की दृष्टि से परे थी। वे तो संसार में सत्य को दृढ़ करवाने के लिए ही प्रकाशमान हुए थे। इसलिए उन्होंने अपनी अंतर-दृष्टि अर्थात् रहस्यात्मिक अनुभूति द्वारा जो तथ्य उद्घाटित किए वे मात्र सत्य का अंकन था, जिन्हें 'धुर की बाणी' के रूप में शबद-गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संग्रहित किया गया है।

जैसे कि प्रचलित मुख्य धर्मों हिन्दू और

*२२, प्रभु पार्क सोसायटी, पुरानी छानी रोड, वडोदरा-३९०००२, मो: ०९९१३०५४३२३

इस्लाम की अपनी-अपनी मान्यताएं हैं, जिनमें से कई एक चिरंतन सत्य से मेल नहीं खाती, परन्तु श्री गुरु नानक देव जी ने निर्भयतापूर्वक सत्य को उजागर करते हुए अपनी बात कही। इसके अतिरिक्त कई भ्रामिक बातों एवं अनसुलझी गुत्थियों के बारे में भी संकेतक रूप में प्रकाश डाला।

आइए, श्री गुरु नानक देव जी के दर्शाए गुरसिक्खी के मार्ग अर्थात् दिशा-सूचक तथ्यों को वैज्ञानिक दृष्टि से परखें। निस्संदेह अकाल का सत्य वैज्ञानिक सोच पर भारी पड़ेगा, क्योंकि मनुष्य की सोच सीमित है और गुरमति की धुरी कालातीत सत्य पर टिकी हुई है।

जब से मनुष्य की वैज्ञानिक सोच ने अंगड़ाई ली है वह सृष्टि के रहस्यों को जानने का प्रयास करता रहा है। विशेष रूप में उसमें सृष्टि के आरंभ के बारे में जानने की जिज्ञासा प्रबल थी। समय-समय पर कई प्रकार की थ्यूरियां उभरीं और एक-दूसरी को नकारती रहीं।

श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी पावन बाणी में इस जिज्ञासा को इन शब्दों में अंकित किया है :

अंत कारणि केते बिललाहि ॥
ता के अंत न पाए जाहि ॥ *(पन्ना ५)*

उपरोक्त विषय के बारे में उनका केवल इतना ही कहना है कि जिस कर्त्ता ने सृष्टि की रचना की है मात्र वो ही इस रहस्य को जानता है:

जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ॥
(पन्ना ४)

विज्ञानी समय और पुलाड़ में उलझ कर रह गए थे। वे पुलाड़ की तीन भुजाओं (लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई) के जोड़ने-घटाने के सूत्र तलाश रहे थे। परन्तु चौथी भुजा उनकी दृष्टि में नहीं समाती थी। पुलाड़ की तरह, समय का अपना अस्तित्व और महत्व है, जो जीवन के सार-तत्व को समेटे हुए है, क्योंकि समय की परतें जुड़ती चली जाती हैं, इसलिए भूत काल रहस्य की परतों अर्थात् धुंध में सिमटा होने के कारण पूर्ण रूप में पकड़ में आना संभव नहीं।

श्री गुरु नानक देव जी ने 'समय' के आरंभ होने की पूर्व-स्थिति के बारे में अपनी बाणी में इस प्रकार शबदबद्ध किया है :

अरबद नरबद धुंधूकारा ॥
धरणि न गगना हुकमु अपारा ॥ (पन्ना १०३५)

भावार्थ: कोटि-कोटि युगों अर्थात् अगणित युगों से परे, चारों ओर पूर्ण अंधकार था। न धरती, न आकाश, मात्र ईश्वर का हुक्म प्रवाहित था। न दिन, न रात, न सूर्य, न चंद्र, केवल शून्य-समाधि की अवस्था थी। सृष्टि की रचना के चारों स्रोतों में से कोई नहीं था। न बाणी, न हवा, न जल, न जन्म, न मृत्यु, न स्वर्ग, न नर्क, न कोई त्रिदेव अर्थात् ब्रह्म, विष्णु, महेश, था तो मात्र अकाल पुरख। न नर, न नारी, न जाति, न पाति, न सुख, न दुख और तब, जब उसे भाया तो सृष्टि की रचना की, बिना किसी जाहिरा (दृश्य) शक्ति के (विराट) विस्तार किया। उसने त्रिदेव उत्पन्न किए, मनुष्यों के अंदर माया के प्रति लगाव पैदा किया। इस प्रकार वो ही था/है, जिसने सारी सृष्टि की रचना की। वह स्वयं निराकार से साकार हुआ। श्री गुरु नानक देव जी कहते हैं कि जो उस (सिरजनहार) से प्रेम करता है, वे उसके साथ एकासुर हो जाते हैं, वे उसके विस्मादी रंग में रंग कर उसके गुण गाते हैं।

श्री गुरु नानक देव जी ने उपरोक्त रचना-प्रक्रिया को इन शब्दों में भी व्यक्त किया है:

कीता पसाउ एको कवाउ ॥ *(पन्ना ३)*

अर्थात् अपने हुक्म से सारा संसार बना दिया।

पउणु पाणी सुंनै ते साजे ॥
स्रिसटि उपाइ काइआ गड़ राजे ॥ (पन्ना १०३७)

अब विज्ञान की ओर देखें तो विज्ञान के अनुसार सृष्टि-रचना से पहले शक्ति का अथाह समुद्र जलते हुए आग के गोले की तरह एक बिन्दु के रूप में था। हम विज्ञान के साथ जुड़े विचारकों से सुनते आ रहे हैं कि इस बिन्दु में एक धमाका हुआ, फिर शक्ति ने पदार्थ का रूप धारण किया, यह रूपांतर अब भी जारी है और ब्रह्मांड फैलता जा रहा है। पर विज्ञान अभी तक यह नहीं बता पाया है कि जिन पदार्थों से धरती, सूर्य, चन्द्र, तारे आदि बने, वे पदार्थ कैसे बने? गुरबाणी निरंकार के स्रोत की ओर इंगत करती है। विज्ञान इस बात की हामी भरता है कि ब्रह्मांड का जन्म बिग-बैंग से हुआ।

भौतिक विज्ञान चार प्रकार की शक्तियां मानता है। **Strong Nuclear, Weak Nuclear, Electro-Magnetic** और **Gravity** अर्थात् आकर्षण शक्ति। इनसे मैटर और ऐंटी-मैटर का जन्म हुआ, परन्तु कई प्रश्नों का उत्तर बिग-बैंग के पास भी नहीं है।

Tidal Theory के अनुसार पहले हर जगह धुंध अर्थात् **Nebula** होता है। इनमें चक्र पैदा होते हैं। चक्रों से गर्मी उत्पन्न होती है। फिर ठंडे होने पर तारे बनते हैं। ग्रह सूर्य से टूट कर उसके चक्र काटने लगते हैं। ग्रहों से उपग्रह पैदा होते हैं अर्थात् **Nebula** कच्चा माल है। अरस्तु इस बात पर किन्तु लगाता है कि यदि मादा (**Matter**) अनादि है तो मादा कहां से आया? इसमें हिलजुल (हरकत) कैसे पैदा हुई?

आइए, अपने अस्तित्व पर दृष्टिपात करें कि इस सूर्य मंडल में पृथ्वी किस गिनती में आती है। हमसे सबसे नजदीक का तारा भी चार प्रकाश वर्ष की दूरी पर है अर्थात् हमसे ९० खरब किलोमीटर से अधिक की दूरी पर है, जबकि सूर्य हमसे मात्र १,४९,८९,१०० किलोमीटर है, जिसका प्रकाश हम तक पहुंचने में एक सेकिंड में १,८६,००० मील की गति से लगभग ८ मिनट और १८ सेकिंड लग जाते हैं। यही विस्मादी रंग है!

इस्लाम के अनुसार सात आकाश और सात पाताल हैं। परन्तु गुरु जी अपनी दिव्य दृष्टि के अनुसार:

--पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥
(पन्ना ५)

--कई कोटि देस भू मंडल ॥
कई कोटि ससीअर सूर नख्यत्र ॥ (पन्ना २७५)
--कई कोटि खाणी अरु खंड ॥
कई कोटि अकास ब्रहमंड ॥ (पन्ना २७६)

और आज इसकी पुष्टि विज्ञान कर रहा है। साधारण आंख से लगभग १००० तारे दिखाई देते हैं। बड़ी दूरबीन से यह गिणती आठ करोड़ तक पहुंचती है एवं फोटो प्लोटों वाली दूरबीन से तीन अरब होगी।

आज खोज यहां तक पहुंच चुकी है कि इस दिखाई देने वाली आकाश-गंगा जैसी करोड़ों आकाश गंगाएं हैं अर्थात् असीम की हद् तक, जिसे गुरबाणी में पावन शब्दों में अंकित किया है:

खंड पताल असंख मै गणत न होई ॥
(पन्ना १२८३)

इसी प्रकार हिन्दू धर्म की मान्यता के अनुसार कि धरती को बैल ने अपने सींगों पर उठाया हुआ है, के भ्रम के निवारण हेतु अपनी विशेष शैली में श्री गुरु नानक देव जी इसके प्रति प्रश्न करते हैं :

धरती होरु परै होरु होरु ॥
तिस ते भारु तलै कवणु जोरु ॥ (पन्ना ३)

कि धरतियां तो अगणित हैं, फिर उनका बोझ (भार) कौन उठाता है? ऐसे ही एक अन्य वैज्ञानिक तथ्य की पुष्टि कि पृथ्वी, सूर्य की आकर्षण-शक्ति के कारण उसके इर्द-गिर्द घूमती है, को गुरबाणी में ऐसे व्यक्त किया गया है :

डोलु बधा कसि जेवरी आकासि पताला ॥
(पन्ना २२८)

और चन्द्र, सूर्य से प्रकाश लेता है, के बारे में यह टूक :

ससि घरि सूरु वसै मिटै अंधिआरा ॥ (पन्ना ९४३)

इसी प्रकार अगिणत सूर्यों और चन्द्रों के बारे में फरमान है :

कोटि सूर जा कै परगास ॥ . . .
कोटि चंद्रमे करहि चराक ॥ (पन्ना ११६२)

यदि गुरबाणी संकेतक रूप में इंगित करती है कि :

जुग छतीह गुबारु करि वरतिआ सुंनाहरि ॥
(पन्ना ५५५)

अथवा:

जुग छतीह कीओ गुबारा ॥
तू आपे जाणहि सिरजणहारा ॥ (पन्ना १०६१)

तो विज्ञान के प्रचलित सिद्धांत के अनुसार (१) ४.५ खरब वर्ष पूर्व सूर्य और उसका परिवार घनी धूड़ का गुबार था। (२) जीवन का आरंभ ३.५ खरब वर्ष पूर्व हुआ।

परन्तु यह अनुमान मात्र हैं। सत्य सदैव विस्मयकारी होता है और सत्य के खोजार्थी को गुरमति में 'खोजी विगसे' कहकर साधुवाद दिया है। यहां तक कि श्री गुरु नानक देव जी सत्य के खोजी पर बलिहार जाते हैं।

किसी फारसी के शायर का यह कथन कितना सटीक है :

माज़ि आगाफ़ उज़ि अंजामि जहान बेखबरम।
अवल उ आखीरन कोहना किताब उफ्ताद असत।

कि सृष्टि किसी किताब की ऐसी हस्तलिखित है, जिसके न शुरुआत (आरंभ) के पृष्ठ हैं और न आखिर (अंत) के।

सार रूप में कहा जा सकता है कि श्री गुरु नानक देव जी का मार्ग विज्ञान की कसौटी पर केवल खरा ही नहीं उतरता वरन् विज्ञानियों को आगे की दिशा-बोध देने में भी सक्षम है। इसीलिए आज संसार के विचारक/चिंतक/ फिलासफर श्री गुरु नानक देव जी के मार्ग को एक वैज्ञानिक धर्म मानने को बाध्य हैं, क्योंकि वह केवल सत्य का प्रतिपादक है और मनुष्य को उसकी विवेकशीलता द्वारा सदैव सत्य का ही अनुसरण करने एवं धारण करने का लक्ष्य निर्धारित करता है, जिससे उसका पूर्ण सत्य का ज्ञान प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त हो सके।

परन्तु हमारा खोखला दंभ इस तथ्य को खुले मन से स्वीकार नहीं कर पाता कि मनुष्य की सोच अथवा उड़ान असीम आकाश में लघु अर्थात् बौनी ही रहेगी, क्योंकि जैसे चन्द्र, प्रकाश के लिए सूर्य का अवलम्बी है उसी प्रकार जीव-अंश, पूर्णांक के समक्ष अपूर्ण ही रहेगा। मनुष्य अर्थात् मनुष्य का व्यक्तित्व अनंत काल के सामने एक क्षण मात्र ही है अथवा यूं कहा जा सकता है कि अथाह सागर की एक बूंद कि अनंत मरूस्थल का रेत का एक कण।

साधारण मनुष्य तो दुविधाग्रस्त रहता ही है। कथित वैज्ञानियों की वैज्ञानिक सोच की एक झलक--'चन्द्र-यान छोड़ने से पहले संबंधित वैज्ञानिकों ने अपने मिशन की सफलता के लिए एक धार्मिक-स्थल पर जाकर प्रार्थना की।' पता नहीं यह समाचार कहां तक सत्य है और यदि सत्य है तो ' . . . सोने पर सुहागा'। क्योंकि सत्य पारदर्शी होने के कारण पूर्वग्रह से मुक्त होता है। सत्याचारी का यही गुण उसे अद्वितीय बनाता है और श्री गुरु नानक देव जी का मार्ग प्रत्येक मनुष्य को सत्याचारी बनने का उपदेश ही नहीं देता वरन् व्यवहारिक शिक्षा भी प्रदान करता है और यही विज्ञान अर्थात् वैज्ञानिकों का लक्ष्य है। हां, इस तथ्य को हृदयंगम करना होगा कि सत्य के अन्वेषण के लिए परम सत्य की

(शेष पृष्ठ १६ पर)

नवम सतिगुरु जी का श्री अमृतसर तथा वल्ला गांव में आगमन

*-सुरिंदर सिंघ निमाणा**

श्री गुरु तेग बहादर साहिब बाबा बकाला से चलकर श्री अमृतसर आये। श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन-दीदार किये हुए गुरु जी को बहुत समय हो चुका था। दर्शन-दीदार की गुरु जी की तीव्र इच्छा थी। अमृतसर की नगरी में ही जन्मे, पले और बड़े हुए थे लेकिन परिस्थितियों ने उन्हें चिरकाल तक अपने ननिहाल गांव बकाला में ही रहने के हालात पैदा कर दिये।

जब सतिगुरु जी के अमृतसर आने का समाचार श्री हरिमंदर साहिब श्री अमृतसर पर कब्जा जमाये मसंदों अथवा सोढियों को मिला तो वे और अधिक अशांत हो गए। मायाधारी प्राय: अशांत ही रहते हैं चूंकि उनकी वृत्ति सदैव माया के कीचड़ में ही फंसी रहती है। मायाधारी को पावन गुरबाणी में *'अति अंना बोला'* कथन किया गया है। माया की चर्बी सोढियों-मसंदों की आंखों पर इस कद्र चढ़ी तथा जमी हुई थी कि गुरगद्दी पर विराजमान सतिगुरों की अजमत को भी मानने से वे पूर्णत: इंकारी हो बैठे।

ज्यों ही श्री गुरु तेग बहादर साहिब अपने दादा-गुरु सतिगुरु अरजन देव जी द्वारा निर्माण कराये श्री हरिमंदर साहिब में प्रवेश करने ही वाले थे कि मसंदों और सोढियों ने नीचता के शिखर का दिखावा कर दिया। उन्होंने श्री हरिमंदर साहिब के द्वार बंद कर दिये और अपने घरों में जाकर छुप गए। यह समझ लिया कि गुरु जी श्री हरिमंदर साहिब पर कब्ज़ा करने आ रहे हैं। वास्तव में जिनके दिलों में खोट होती है वे ऊंची व निर्मल रूहों की पहचान करने में कदापि सक्षम नहीं हो सकते। वैसे भी मनोवैज्ञानिक सच है कि मनुष्य सभी को अपनी दृष्टि से ही देखता है।

सतिगुरु जी की तीव्र दर्शन-अभिलाषा अधूरी रह गई जिसका दुख उनके संवेदनशील हृदय में असीम था। सतिगुरु जी इस दुखदायक घटना के घटित होने के पश्चात श्री हरिमंदर साहिब से कुछ दूरी पर विराजमान हुए जहां गुरुद्वारा भोरा साहिब निर्माण किया गया है। उन्होंने तत्कालीन स्थिति पर गहन चिंतन किया। सोढियों-मसंदों का सिक्ख संगतों के साथ हो रहे अशोभनीय व्यवहार का रूप भी अनुभवी सतिगुरों को पीड़ित कर रहा था। इस प्रकार भाव-प्रवाह की मानसिक-आत्मिक स्थिति में बाबा बकाला को वापस जाते हुए सतिगुरु जी ने कुछ समय श्री अमृतसर से चार मील की दूरी पर दक्षिण-पूरब दिशा में स्थित गांव वल्ला में व्यतीत किया।

सतिगुरु जी ने सर्वप्रथम पीपल के नीचे आसन लगाया जहां गुरु नानक नाम-लेवा संगत ने इस ऐतिहासिक घटना की स्मृति में गुरुद्वारा साहिब का निर्माण किया है। सतिगुरु जी की मानसिक-आत्मिक अवस्था की अनुभूति करते हुए वल्ला गांव की माता हरिआं ने उनको विशेष श्रद्धा भावना से अपने घर विराजमान करा कर आवभगत की। माता की निर्मल श्रद्धा भावना का प्रतिउत्तर देते हुए उसकी इच्छा के अनुरूप सतिगुरु जी कई दिन यहां रहे और गांव तथा ईद-गिर्द की संगत को प्रभु-नाम के निर्मल उपदेश से सरशार करते रहे। सतिगुरु के चरण-स्पर्श से माता जी का साधारण-सा घर आज सिक्ख संगत तथा श्रद्धालुओं की दृष्टि में पावन ऐतिहासिक स्थान 'कोठा साहिब' बन चुका है। हर वर्ष की भांति यहां इस वर्ष भी ६ फरवरी को भव्य जोड़-मेला आयोजित किया जा रहा है।

**सहायक संपादक*

रहस्यवाद और भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना

*-डॉ. जसबीर सिंघ साबर**

भक्त रविदास जी का युग इस्लामी चिन्तन के अभ्युदय का समय था। राज सत्ता उन शासकों के पास थी जो इस्लाम के पैरोकार थे। भारतीय चिन्तन की बागडोर संकीर्ण एवं अक्खड़ रुचि वाले पुजारियों व मस्त-मलंग योगियों-सन्यासियों के हाथ में थी जो जन-साधारण से कटे हुए थे। भारतीय एवं इस्लामी चिंतन में परस्पर विरोध उभर रहा था। समकालीन सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक परिस्थितियां विकट थीं। इस संदर्भ में भक्त रविदास जी की रहस्य साधना का विवेचन विशेष आकर्षक बन जाता है जिसे प्रस्तुत करने का प्रयास मैं कर रहा हूं।

भक्त रविदास जी की बाणी रहस्यवाद की सूक्ष्म, कोमल, रमणीय एवं आध्यात्मिक काव्य-धारा है। कारण यह कि इन ईश्वरीय वचनों का मूल स्रोत उनका उच्च धार्मिक अनुभव है जो अपने शुद्ध रूप में रहस्यवाद से अविच्छिन्न है। नि:संदेह रहस्यवाद कोई स्वतंत्र सत्ता वाला धर्म नहीं है मगर यह संसार के प्रत्येक धर्म में किसी न किसी रूप में प्राप्य है। इसी लिए डी. डी. रूईनज ने रहस्यवाद को धर्म का अत्यंत तीव्र एवं जीवंत पड़ाव माना है।[१] वैसे भी रहस्यवाद से रिक्त धर्म, कर्म-कांड के वाह्य रूप तक सीमित होकर रह जाता है। भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना को समझने के लिए रहस्यवाद की परिभाषा, मंतव्य एवं रुचि के विषय में विहंगम अवलोकन सार्थक होगा।

रहस्यवाद को किसी विशिष्ट परिभाषा में बांध सकना सुगम नहीं। मूल कारण यह है कि रहस्यवाद अनुभव-आश्रित होता है और जब भी कोई रहस्यवादी अपने अनुभव को भाषाबद्ध करने का प्रयत्न करता है तब उसके व्यक्तिगत विश्वास एवं पूर्वाग्रह स्वत: उसकी व्याख्या में आ शामिल होते हैं। फिर भी कुछ विद्वानों ने इसके समाधान के यत्न किए हैं।

स्पैस्नर सिडनी रहस्यवाद को एक विशिष्ट चेतना मानता है जिसके अन्तर्गत "परम तत्व का त्वरित अपरोथ अनुभव" होने का दावा किया जाता है।[२] "एन्साईक्लोपीडिया ब्रिटानिका" के अनुसार, "रहस्यवाद विशेष प्रकार की मनो-अवस्था का क्षण होता है जिसमें आत्म-अनात्म, मैं और तू का अंतर मिट जाता है। इस क्षण विशेष में जिस आलौकिक चेतना का प्रकाश होता है उसमें रहस्यवाद के विश्व दृष्टिकोण को प्रभावित करने की क्षमता होती है। फलत: समस्त संसार उसकी दृष्टि में एक तरह की नवीन सार्थकता प्राप्त करता है।"[३]

ऐसे ही क्षण की झलक भक्त रविदास जी

1. Mysticism in its simple and most essential meaning is a type of religion . . . It is religion in the most acute and living stage' Runes, D.D. Dictionary of Philosophy, Vision Press, London, 1964, p. 203.

2. What is characteristic of the Mystic is the claim they make to an immediate contact with the transcendent'. Spencer Sydney, Mysticism in World Religion, Carnbury, 1963, p.9

3. Mysticism is the immediate experience of oneness with ultimate reality . . . the relationship into which the mystic is inducted transcends the ordinary distinctions between subject & object or between '1' and 'Thou'. Encyclopaedia of Brittanica, Vol. 5, H.H.S. Publishers, Chicago, 1975, p. 1129

**निदेशक, निदेशालय, दो-वर्षीय सिक्ख धर्म अध्ययन पत्राचार कोर्स, शि: गु: प्र: कमेटी, श्री अमृतसर।*

के *"जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही"* में देखी जा सकती है। इस क्षण को प्राप्त करने वाले साधक दावा करते हैं कि उन्हें परम तत्व का वास्तविक ज्ञान प्राप्त हो गया है। उनका विश्वास होता है कि इस चमत्कारी क्षण में उन्हें एक ऐसी चमत्कारी दृष्टि प्राप्त हो जाती है जिससे उनके चिंतन में परम तत्व के विराट रूप का प्रकाश हो जाता है। आर. एम. बकु इसी विचाराधीन "रहस्यवादी अनुभव को ब्राह्मांड चेतना" की संज्ञा देते हैं।[१] परम तत्व, सृष्टि-रचना तथा जीव के "अंतिम सच" को जानने के लिए अनेक साधन माने जाते हैं। रहस्यवाद इन साधनों में ही ऐसा रहस्यमयी साधन है जो तर्क या बुद्धि से परे है। कारण यह है कि बुद्धि एवं तर्क, शरीर, प्राण और मन की सहायता से कार्य "पहले मुर्गी या अंडा" के चक्रव्यूह में ही फंसे रहते हैं। रहस्यवाद और तर्कवाद के क्षेत्र ही अलग-अलग हैं। इस प्रसंग में श्री दास गुप्ता के विचार सार्थक सिद्ध होंगे: "रहस्यवाद कोई बौद्धिक सिद्धांत नहीं अपितु मूलक तौर पर जीवन का एक प्रभावशाली, जीवंत, आकारात्मक, सृजनात्मक, उच्चतर एवं अच्छा सिद्धांत है जिसको बुद्धि के माध्यम से जाना जा सकता है।"[२] इसी लिए शिशिर घोष "रहस्यवाद को आत्मा और मुक्ति का साधन" बताते हैं।[३]

एन्साईक्लोपीडिया आफ रिलीजन एण्ड ऐथिकस में इस साधना को "आत्मा और परमात्मा के सीधे मिलाप का साधन" माना गया है।[४] मारग्रेट स्मिथ के विचारानुसार "रहस्यवादी अनुभव मानव-चिन्तन में एक ऐसी रहस्यमयी चेतना उत्पन्न करता अनुभव करती है जो बौद्धिक ज्ञान की अवस्था की अपेक्षा अनुभव करने की अवस्था के अधिक निकट होती है एवं यह प्रवृत्ति साधक को "अंतिम सत्य" की प्राप्ति के लिए क्रियाशील करती है।"[५] इवलेन अण्डरहिल का मत है कि "रहस्यवाद" ईश्वरीय बाणी की तरह अंतिम विषयनिष्ट होता है तथा रहस्यवादी वह होता है जो अंतिम सत्य को प्राप्त करने में विश्वास रखता है अथवा उससे तदरूपता प्राप्त कर चुका हो।[६] डॉ. दीवान सिंघ रहस्यवाद का कोई सिद्धांत या दर्शन स्वीकार नहीं करते। वे इसे एक अनुभव या वातावरण बताते हैं कि "जो कुछ एक रहस्यवादी अपनी अन्तर्आत्मा में अनुभव करता है उसे रहस्यवाद कहा जाता है। यह अनुभव या प्राप्ति, आत्मिक धरातल की होने के कारण अत्यंत सूक्ष्म एवं अकथनीय होती है और इसे सहज ज्ञान या इन्द्रियातीत अनुभव कहा जा सकता है।[७]

"अंतिम सत्य" के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक हो सकती है। "अंतिम सत्य" देश, काल और नाम की सीमा से परे है, अतः उस तक पहुंचने के लिए प्रकृति से ऊपर उठना पड़ेगा। मगर उसकी प्रक्रिया जितनी भी तीव्र हो वह कर्त्ता और उसकी रचना की अभेदता को मिटाने में असमर्थ ही रहेगा।[८] रहस्यवाद की

१. *Buck, R.M. Cosmic Conciousness. New York, 1961, p.14*
२. *Das Gupta, S.N. Hindi Mysticism, Motilal Banarsi Dass, Delhi, 107.*
३. *Ghosh, S.K. Mystics ans society, Asia Publishing House, Bombay 1967, p.33*
४. *Encyclopaedia of Religion & Ethics, Vol IX, James Hastings (Ed.) T.T. Clark, Edinburgh, 1967, p. 84*
५. *Smith Margrate, The Nature & Meaning of Mysticism by Richard Woods, (Ed.), Understanding Mysticism, Garden City, New York, 1980, p.25*
६. *Inderhill, Evelyn, Mysticism, Dutton, New York, 1961, p.82*
७. *Deewan Singh, What is Mysticism, Ravi Sahit Parkashan, Amritsar 1981, p. 32*
८. *Deewan Singh, What is Mysticism, Ravi Sahit Parkashan, Amritsar, 1981, p. 32*

विलक्षणता ही यह है कि वह भी केवल परमतत्व के प्रत्यक्ष दर्शन ही नहीं करता है अपितु उसमें अभेद भी हो जाता है। इसीलिए तो आवेश में आकर रचे उनके वचन, गुरु का रूप धारण कर जाते हैं तथा इन ईश्वरीय वचनों को ही गुरु-पद की उपाधि दी जाती है :

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे ॥ *(पन्ना ९८२)*

भक्त रविदास जी की रहस्य साधना में कुछ ऐसे तत्व दृष्टिगोचर होते हैं जिनका सामान्यतया सही प्रसंग में अध्ययन नहीं किया जाता। उदाहरण के लिए भारतीय चिंतनधारा में रहस्यवाद का प्रमाणिक मार्ग, योग मार्ग माना जाता है जिसकी सुगति या प्राप्ति का साधन हठयोग है। चित्त वृत्तियों के विरोध के लिए तथा अर्न्तात्मा में अनहद नाद सुनने के लिए अनेक कष्टकर शारीरिक क्रियाएं की जाती हैं। भक्त रविदास जी की बाणी की कुछ शब्दावली योग मत की मूल क्रियाओं की ओर संकेत अवश्य करती है जिसके अन्तर्गत अनेक भ्रांतियां पाई जा रही हैं। मगर यहां यह बात स्पष्ट करना उचित होगा कि भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना का उससे कोई सरोकार नहीं है। उनकी रहस्य-साधना हठयोग वाली नहीं। उनकी स्पष्ट धारणा है कि इंद्रियों को नियंत्रण में करने वाली यह साधना सार्थक नहीं क्योंकि इस तरह न तो बंधन-मुक्त होना ही संभव है और न परमतत्व की प्राप्ति ही संभव है तथा न निर्मोही मन में प्रेम की चिंगारी ही सुलग सकती है:

कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥ . . .
प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥
(पन्ना ३४६)

इसीलिए वे योगियों की तरह रुंड-मुंड होने की क्रिया को निर्मूल बताते हैं :

बिनु देखे उपजै नही आसा ॥
जो दीसै सो होइ बिनासा ॥
बरन सहित जो जापै नामु ॥
सो जोगी केवल निहकामु ॥ *(पन्ना ११६७)*

तर्क दृष्टि के अनुसार भी भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना योगमुखी हो ही नहीं सकती, क्योंकि परंपरागत योग-मार्ग की साधना व्यक्तिगत है जिसमें खचित होकर जीव अन्य प्राणियों के प्रति कर्त्तव्यविमुख हो जाता है। पुनः योगियों पर दोष लगाया जाता है कि वे विरक्त जीवन-यापन करते हुए नैतिक मंडल से परे निवास रखते हैं। वे न केवल सामाजिक उत्तरदायित्वों से ही अपनी पीठ मोड़ लेते हैं अपितु इस मार्ग के अनुयाइयों को भी ऐसा करने की प्रेरणा करते हैं, यद्यपि स्वयं अकर्मण्य रहने के कारण अपनी आजीविका के लिए समाज पर भार बनते हैं। इन योगियों में अनेक ऐसे भेषज साधु भी हैं जो भाव एवं उन्माद की अवस्था में रहने को ही आध्यात्मिक जीवन का शिखिर समझते हैं और इस आशय की पूर्ति हेतु नशीले पदार्थों का सेवन करते हैं। इनका सबसे निष्क्रिय रूप वाम मार्ग एवं तंत्रवाद है। इसी लिए भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना इन क्रियाओं के प्रतिरोध में, योग की अपेक्षा भक्ति, सहज एवं नाम-मार्ग को मानने वाली है। वैसे भी भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना के संदर्भ में यह तथ्य सर्वमान्य है कि भक्त रविदास जी की बाणी का प्रधान गुण समाजमुखी है, पलायनवादी नहीं। वे स्वयं गृहस्थी एवं कर्मशील प्राणी थे। उनकी रहस्य-साधना का समाज के प्रति दायित्व के समन्वय का मूल कारण बुद्धि, विवेक का जागृत होना है जिस द्वारा वे भले-बुरे की पहचान करने के समर्थ बनते हैं।

ऐसी बुद्धि, विवेक निपट इन्द्रियों एवं उनसे निःसृत ज्ञान से भिन्न परमात्मा से

अनुप्राणित होती है। इस अवस्था में अहंमण्य का सम्पूर्ण विलय करके नम्रता द्वारा, जिज्ञासा द्वारा, कुछ जानने का यत्न किया जाता है। ऐसा विवेक मन से ऊपर उठकर आत्मिक अनुभव द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। भक्त रविदास जी इस अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम थे, इसी लिए वे समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों से व्युत नहीं होते। वास्तव में जिस साधना में विस्माद, मस्ती या कर्त्तव्य-परायणता से विमुख रहने की प्रेरणा की जाए उसकी आध्यात्मिक या व्यवहारिक धरातल पर कोई सार्थकता नहीं है। यह अकुंश है जो रहस्यवाद पर लगा हुआ है। इसलिए भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना अत्यंत जागरूक है। यह बात अलग है कि उन्होंने पूर्व प्राप्त ज्ञान एवं स्थापित धारणाओं को भक्त कबीर जी की तरह कठोर व्यंग्य वाली शैली-शब्दावली में नहीं नकारा है अपितु उनका सकारी रूप ही सामने रखा है। परमार्थ का यह परंपरागत मार्ग वर्ग-विशेष के लिए था। स्त्री या तथाकथित दलित वर्ग इसे धारण नहीं कर सकते थे। इस असमान विभाजन ने समाज के बड़े भाग को परमार्थ के मार्ग से वंचित रखा हुआ था। भक्त रविदास जी ने परमार्थ का जो मार्ग दर्शाया वह जन-साधारण की समझ में आने वाला और प्रत्येक प्राणी को उसका अनुयायी होने का अधिकार देता है। इसी लिए उन्होंने परंपरागत ज्ञान, कर्म और योग मार्ग के स्थान पर भक्ति मार्ग को सर्वोत्तम बताया है। यह भक्ति मार्ग सहज मार्ग है जिसका बटोही स्वत: अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हुए *"तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा"* वाली अवस्था प्राप्त कर लेता है। भक्त रविदास जी की इस रहस्य-साधना में निष्ठा के चार कारण हो सकते हैं :

१. प्रभु-भक्ति में परमात्मा को द्रवित करने की प्रबल शक्ति होती है, अपितु यह एक ऐसी अवस्था में पहुंचने में सक्षम बनाती है जहां भक्त परमात्मा को सम्बोधन करता है : *"अपने छूटन को जतनु करहु हम छुटे तुम आराधे ॥"*

२. प्रभु-भक्ति का पल प्रत्येक प्राणी के लिए समान है, बेशक वह किसी भी जाति, श्रेणी, रंग या नस्ल का हो।

३. भक्त रविदास जी स्वयं गृहस्थी थे और प्रवृत्ति मार्ग को वरीयता देते थे। ऐसी दशा में ऐसी साधना ही अच्छी और सार्थक होती है।

४. भक्त रविदास जी जिस युग के साक्षी थे उस युग की धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियों में केवल यही मार्ग प्रस्तुत हो सकता था। इस मार्ग को इस तरह के महापुरुषों एवं अनुयाइयों ने इस तीव्रता से अपनाया कि इस युग का नाम ही भक्ति-काल प्रसिद्ध हो गया। भक्त रविदास जी इस भक्ति मार्ग की आधारशिला भाव-भक्ति मानते हैं, जिसका मूल है "सच्चा प्रेम"। इसी लिए भक्त जी फरमान करते हैं :

साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी ॥
तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी ॥ (पन्ना ६५८)

यह प्रेमावस्था एक रहस्यानुभूति है जिसका वर्णन अकथ है। सच्चा प्रेमी अपने प्रियतम से वस्तु-जगत की अवांछित वस्तुओं की भिक्षा नहीं मांगता, वह तो जन्म-जन्मांतर से प्रभु-मिलन के लिए तड़पता है :

बहुत जनम बिछुरे थे माधउ इहु जनमु तुम्हारे लेखे ॥ (पन्ना ६९४)

भक्त रविदास जी की भाव-भक्ति की इस रहस्य साधना के प्रसंग में एक बात ध्यान रखने वाली है कि उनकी बाणी में नवधा भक्ति भी सम्मिलित है। मगर वह नवधा भक्ति उस फोकट कर्मकांड से रहित है जो कर्त्तव्य-पालन एवं कर्मण्यता की अपेक्षा लकीर पीटने और अंधविश्वास में परिवर्तित हो चुकी है। वे इस

दृष्टि से पूर्णतया चेतन्य थे कि जिस विधि में कर्मकांड का प्रधान्य होता है वह शनै: शनै: पाखंड का रूप ले लेती है। पाखंड, सच के अभिलाषियों के लिए सबसे बड़ी रुकावट है जिसमें धर्म-कार्य अपनी सामाजिक प्रासंगिकता खो बैठते हैं। इसी लिए भक्त रविदास जी ने सत्य धर्म का अनुसरण किया और अपनी रहस्य यात्रा में से फोकट कर्मकांड, जात-पात और ऊंच-नीच या वर्ग-विभाजन को तिलांजलि दे दी। इस संदर्भ में स. दलजीत सिंघ का मत अधिक सार्थक है कि "जीवन का आदर्श तो रहस्यवादी धरातल पर परमात्मा से एकरूप होना है। यह आनंदमयी समय अथवा सूफियों वाली मस्ती केवल प्रभु-प्रेम द्वारा ही प्राप्त हो सकती है।"[१]

भक्त रविदास जी ने अनेक रहस्यवादी तत्वों का उल्लेख किया है मगर तीन तत्व "गुरु, नाम और कृपा" उनकी बाणी में प्रमुख हैं। उनकी बाणी में लगभग हरेक पावन शबद इन तत्वों से युक्त है क्योंकि इनके अभाव में किसी साधना मार्ग का कोई अर्थ नहीं रह जाता। इसी लिए इन तत्वों पर अधिक बल दिया गया दृष्टिगोचर होता है जिसके स्पर्श से सोना-सुधा बन जाते हैं और परमात्मा को मिलने की लालसा भी गुरु-प्रेरणा द्वारा प्रबल होती है :

जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही ॥
इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नही ॥ . . . (पन्ना ६५८)

भक्त रविदास जी की रहस्य साधना में गुरु का स्वरूप अशरीरी है, क्योंकि उनकी बाणी में किसी देहधारी गुरु का संकेत नहीं मिलता। वास्तव में भक्त जी रहस्यवाद की जिस चरम सीमा तक पहुंच चुके थे वहां शरीरी और अशरीरी गुरु का अंतर-भेद मिट जाता है। इस अनुभवी अवस्था के समय "शबद-गुरु" ही साधक की शक्ति को सक्रिय करता है और वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में "शबद-गुरु" से ही मार्गदर्शन लेता है। सिद्ध रहस्यवादी के लिए शबद-गुरु ही उस "परम सत्य" का प्रकट और अप्रकट रूप होता है। इस तथ्य से भक्त रविदास जी की रहस्य साधना को समझने में सहायता मिलेगी।

भक्त रविदास जी की रहस्य साधना का दूसरा प्रधान तत्व "नाम" है। मध्य काल की हर प्रकार की भक्ति-भावना में "नाम-साधना" का अत्यधिक महत्व है। भक्त रविदास जी ने मंत्र-साधना की जगह इसे नाम-स्मरण के रूप में व्यक्त किया है। नाम की सैद्धांतिक व्याख्या की जगह उन्होंने नाम-साधना पर बल दिया है। उनके अनुसार नाम-स्मरण करने वाला साधक माया के बंधनों से मुक्त होकर प्रभु-मिलन की ओर अग्रसर होता है। नाम-स्मरण करने वाले को लौकिक एवं पारलौकिक फल प्राप्त होते हैं और उच्च वर्ग के लोग भी उसका यशगान करने लगते हैं।

सारांश यह कि भक्त रविदास-साधना में नाम-साधना पर अत्यधिक बल दिया गया है, क्योंकि जीव को इसकी अत्यंत आवश्यकता है। इसके बिना अन्य सभी क्रिया-कलाप व्यर्थ हो जाते हैं।

भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना में जिस 'गुरु' एवं 'नाम-स्मरण' की बात की गई है उसकी प्राप्ति 'गुरु' की कृपा द्वारा ही होती है। जिस रहस्यवाद की प्रारंभ में चर्चा की गई है वह तभी संभव है यदि गुरु की कृपा हो। यदि गुरु की कृपा न हो तो मनुष्य का सारा मान व्यर्थ हो जाता है। गुरु की कृपा के बिना

१. *Daljit Singh, Sikhism; A Comparative Study of its Theology and Mysticism, Sterling Publishers, Delhi, p.157*

सिमरन, मुक्ति और "अंतिम सत्य" को जानने की इच्छा एकदम असंभव है। यह कृपा तभी संभव है जब साधक "मैं" तथा "तू" के चक्र से निकलकर, अहं का परित्याग करके "दैवी आज्ञा" के अनुसार अपना जीवन ढाल लेता है :

प्रानी किआ मेरा किआ तेरा ॥
जैसे तरवर पंखि बसेरा ॥ . . .
मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी ओछा जनमु हमारा ॥
तुम सरनागति राजा राम चंद कहि रविदास चमारा ॥ (पन्ना ६५९)

उपरोक्त कुछ मुद्दे भक्त रविदास जी की इस रहस्य-साधना के सम्बंध में हैं जिनका अनुभव उनके द्वारा रचित दैवी बाणी द्वारा होता है। भक्त रविदास जी की रहस्य-साधना का प्रधान तत्व परमतत्व से एक होना है, मगर इस पड़ाव पर पहुंचने का साधन उससे भिन्न है जो योग मार्ग की हठयोग-साधना के अन्तर्गत आता है। वे रहस्यवादी तो थे ही साथ ही समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों के प्रति पूर्णतया जागरूक भी थे। उनकी रहस्य-साधना का केन्द्र-बिन्दु भक्ति का, सहज और नाम-स्मरण का मार्ग है।

गुरु नानक देव जी का मार्ग . . .

(पृष्ठ ९ का शेष)

अवधारणा किसी भी रूप में अवरोधक नहीं, वरन् प्रेरणादायक सिद्ध होगी।

एक उर्दू के शायर ने क्या खूब कहा है:

जहां तक आख़री नज़रें, तेरी मुश्किल से पहुंची हैं,
वही मंजिल की हद है, ख्वाबे-मंजिल देखने वाले।

आधारशिला :

१) सिख वीचारधारा (पंजाबी -प्रो. प्रीतम सिंघ
२) गुरमति वीचार (पंजाबी) -स. दीवान सिंघ
३) नितनेम टीका (हिंदी) -प्रो. साहिब सिंघ, अनु: परमजीत कौर
४) एक ओट एको आधारु (पंजाबी) -ज्ञानी अरजन सिंघ, लेख (साइंस ते गुरबाणी)
५) Guru Nanak Dev's View of Life Amplified - S. Narain Singh
६) God In Sikhism -Dr. Rajinder Kaur
७) मुख-बंध (अधिआतम करे ता साचा) (पंजाबी) -स. रूप सिंघ
८) सूर्य देव, गुजराती लेख (श्रीयुत, शशिन्) तथा कुछ अन्य फुटकल लेख

कविता

नींद

*-डॉ. दादूराम शर्मा**

स्नान-सी जो खोलती है, ताजगी के द्वार।
दबे पांवों हो रहा है, नींद का संचार।
पलक झपकी और होता, श्रांति का परिहार।
तप्त-आहत चित्त का, यह बाम-सा उपचार।
प्रकृति करुणामयी का यह अन्यतम उपहार।
और जीवन-भोज का है, पुष्टिकर आहार।
मधुर विस्मृतिलोक का है, यह सुखद विहार।
यह जो आए मनुज-मन, हो मुक्त-चिन्ताभार।
यह न आए तो करें, मिल आधि-व्याधि प्रहार।
कायकारा से करे, चिर नींद जीवोद्धार।
किसी भी बंदे के प्रभु! न टूटें निद्रा-तार।
सुन पड़े जिससे न, जग में आर्तजन-चीत्कार।

**महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१, फोन : ०७६९२-२२२७९२*

भक्त रविदास जी

-श्री सुरजीत 'दुखी'*

रविवार को जन्म हुआ, 'रविदास' ही कहलाए।
प्रादेशिक भाषाओं के कारण, 'रैदास' इत्यादि नाम पाए।
सच्ची साधना साध के, अति विनम्र रहाए।
सिमरन, सेवा, मुक्ति साधक के गुण-कर्म बताए।
'आचरण सुधार' ही साधना, परमतत्व की सिखलाई।
ज्ञान, भक्ति और कर्म योग की रीति बतलाई।
मध्ययुगीन महामानवों में, अपनी जगह बनाई।
भक्ति में पूर्ण रत होकर, 'भक्त' उपाधि पाई।
निवृत्ति मार्ग को कायरों का आभूषण बतलाया।
सन्यास-प्रथा का उन्मूलन किया, कर्त्तव्य-पालन समझाया।
धर्म की रूढ़ियों, अन्धविश्वासों ने है कहीं छुपाया।
जागृति पैदा कर समाज को उत्कृष्ट बनाया।
धर्म का मार्ग स्वतंत्र चिन्तन द्वारा दिखलाया।
प्रेम अनुभूति को ही आपने सर्वोपरि बताया।
जाति-वर्ग की संकीर्णता से, था मुक्त कराया।
विश्व समाज का मानव को, भाग अटूट बनाया।
बाणी रचकर भक्त जी ने, प्रसारित था ज्ञान किया।
क्या व्यक्तिगत क्या सामाजिक, सभी उलझनों का समाधान किया।
गुरु अरजन ने इस बाणी को, हृदय से प्रवान किया।
आदि ग्रंथ साहिब में शामिल करके, हम सबका कल्याण किया।
स्वप्रकाशित, बहुमुखी विलक्षण व्यक्तित्व था आया।
लोक-भाषा को फिर और बहुत समृद्ध बनाया।
सर्वोदय और विश्व-भ्रातृ-भाव बाणी का आधार बनाया।
तभी तो भक्त रविदास चहुं चक्कों, में था 'भक्त भक्त' कहलाया।
निर्गुण, निराकार उपासना पे, बल देकर कर्म कमाया।
स्वानुभूति और विचार ही, अति आवश्यक यह बतलाया।
जनसाधारण को छुटकारा, बिपरवादियों से दिलवाया।
दलित समाज में स्वाभिमान कर पैदा, उचित स्थान व मान दिलाया।
हिन्दू, मुस्लिम समन्वय को जीवन-आदर्श बना अपनाया।
ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शुद्र सबको, प्रभु की अंस बताया।
ईश्वर-भक्ति की घुट्टी से पतितों को पुनीत बनाया।
तभी तो राग बिलावलु में आपका, यह पद है आया।
"ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥"
मानव समाज ने क्रांतिकारी, चिंतक, समाज-सुधारक पाया।
मुक्त किया रोगों-सोगों से, बहुत बड़ा उपकार कमाया।
चालीस पदों और एक श्लोक की रचना ने दुखी हर दुख मिटाया।
निर्मल भक्ति का संदेशा 'गुरु ग्रंथ साहिब' में समाया।

**३३२/९, गली जट्टां, अंदरून लाहौरी गेट, श्री अमृतसर। मो: ९९१४५३१२२१*

महान् समाज-सुधारक भक्त रविदास जी

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

इस संसार में समय-समय पर पीर, फकीर, पैगंबर, गुरु, संत, भक्त आदि जन्म लेते रहे हैं। इन महान् आत्माओं ने अपने ज्ञान के प्रकाश द्वारा इस दुनिया को रौशन किया और भूले-भटके लोगों को जीवन जीने का ठीक व उचित मार्ग दिखाया, कुरीतियों, पापों, आडम्बरों तथा छुआ-छूत के अंधेरों को दूर भगाया, मन के अंधेरे कोनों तक को रौशनाया। कर्मशील, महाज्ञानी, इंकलाबी विचारों वाले तथा महान समाज सुधारक भक्त रविदास जी ने अवतार धारण कर अपने समय में नरक समान बन चुके समाज की योग्य, उल्लेखनीय अगवानी की और गरीब, निरीह, शोषित, पिछड़े लोगों को समाज में सम्मानयोग्य स्थान दिलाया। उनको समाज में, जिसके वे अधिकारी थे, उचित पहचान दिलाई। उनको गर्वपूर्वक जीवन जीने के काबिल बनाया।

भक्त रविदास जी ने माघ मास की पूर्णिमा को सन् १३७६ ई में काशी में जन्म लिया। इनको **'रैदास'**, **'रुयीदास'** भी कहा जाता था। इनके पिता का नाम श्री राघव (रघुनाथ मल) जी तथा माता का नाम श्रीमती कर्मा देवी था।

उस समय समाज में छुआ-छूत, ऊंच-नीच का भेदभाव बहुत फैला हुआ था। ब्राह्मण वर्ग से संबंधित लोग स्वयं को श्रेष्ठ, ऊंचे मनुष्य समझते थे। वे दलित व पिछड़े वर्ग के लोगों को घटिया तथा नीच समझते थे। उस वक्त एक महान् संत थे। वे ब्राह्मण वर्ग से संबंध रखते थे। वे बहुत ज्ञानी व महान् विचारक थे। उनका नाम भक्त रामानंद था। भक्त रामानंद जी जात-पात, ऊंच-नीच, छुआ-छूत में बिलकुल विश्वास नहीं रखते थे। भारत में मूर्ति-पूजा और सगुण भक्ति की बहुलता थी। भक्त रामानंद जी ने निर्गुण भक्ति की ऐसी प्रचंड लहर चलाई कि पिछड़ी व दलित समझी जाने वाली जातियों से संबंधित संत, भक्त, साधु इस लहर के साथ जुड़ गए। उन्होंने देवी-देवताओं की पूजा का खंडन किया और नाम-सिमरन, सच बोलने की प्रेरणा दी, कर्मकांडों से दूर रहने को कहा, एक ओअंकार का नाम जपने को कहा, पाखंडियों, ढोंगियों से बचाया। उस समय पुजारी लोग पूजा-पाठ के नाम पर तथा कई किस्म के कर्मकांडों द्वारा सामान्य-जनों को लूटते थे, भगवान के नाम पर ठगते थे। भक्त रामानंद जी की निर्गुण भक्ति लहर से प्रभावित होकर सत्य-मार्ग को पाने के इच्छुक भक्त रविदास जी ने उन्हें अपना गुरु धारण कर लिया। इस बात पर पंडितों ने भक्त रामानंद जी की बहुत आलोचना की कि उन्होंने एक दलित को अपना शिष्य क्यों स्वीकार किया? वे कहते थे कि आज दलित नाम-सिमरन, पूजा

*****९२५, बी-एक्स, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जालंधर-१४४००४, मो : ०९८७२२-५४९९०

करने का अधिकार पा रहे हैं, कल को वे अन्य अधिकार भी मांगेंगे, हमारे बराबर बैठेंगे, उन्नति करेंगे। भक्त रामानंद जी ने उनकी आलोचना को नजर-अंदाज कर दिया। पंडित यानि पुजारी लोग आम लोगों की भलाई के लिए कोई काम नहीं करते थे, केवल अपने हित साधते थे, माया के भंडार जमा करने में लगे रहते थे। उन्होंने धर्म को धंधा बना रखा था। भक्त रविदास जी ने शोषित, गरीब एवं निमाणे लोगों की भलाई के लिए बहुत काम किए। उनके पास जो धन होता, उससे भूखों के लिए लंगर की व्यवस्था तथा धर्मशालाएं और भक्तों के लिए डेरे आदि बनाने के काम करते थे। इस कारण ब्रह्मण लोग भक्त जी को अच्छा नहीं समझते थे और उन्हें बुरा-भला कहते थे, उनके साथ बुरा बर्ताव करते थे। भक्त जी को उनकी 'अक्ल' पर तरस आता। भक्त जी अपनी धुन के पक्के थे, दृढ़ निश्चय वाले थे। वे उनकी धमकियों से बिलकुल नहीं डरते थे। 'पीपा जी परचई' साखी से पता चलता है कि भक्त रविदास जी भक्त रामानंद जी के साथ कई जगहों पर शुभ कार्यों हेतु, परोपकारी काम करने हेतु जाते, तीर्थ-यात्रा के बहाने जाते और इकट्ठे हुए लोगों को 'शबद' की शक्ति से, गोबिंद, हरि, ओअंकार की महिमा से अवगत् करवाते; पाखंडी पुजारियों के पाखंडों का भांडा फोड़ते तथा उनके प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देते।

अपनी मीठी वाणी, मीठे वचनों द्वारा वे लोगों का मन मोह लेते थे। वे ज्ञानपूर्वक व तर्कपूर्ण ढंग से अपनी हर बात कहते थे। उनके नाम की कीर्ति चहुं ओर फैल गई। चित्तौड़ की रानी मीरां ने भक्त रविदास जी से भक्ति-मार्ग की सूक्ष्मता को समझा।

वे जात-पात, ऊंच-नीच में विश्वास नहीं रखते थे। उन्होंने स्वयं किरत कर दुनिया के सभी किरतियों का सम्मान बढ़ाया और किरत की कीर्ति को फैलाया। यह जगत जो पापों तथा कुरीतियों के कारण जगह-जगह से जैसे फट-सा गया था, उसे सिलने का काम भक्त जी ने अपनी 'आर' द्वारा किया। कर्मकांडों का चाम उतारने के लिए 'रंबी' (खुरपी) का उपयोग किया, नव-जगत, नवयुग की सृजना की। अपनी 'दौरी' में से अमृत का वो दौर शुरू किया कि दुनिया को हरा-भरा और खुशहाल बना दिया। 'तोही मोही' का भेदभाव मिटा दिया। भक्त जी ने कहा कि जब हमारी आत्मा का परमात्मा से मिलन हो जाता है, तब सब तरह के अंतर, फासले समाप्त हो जाते हैं :

तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा ॥
कनक कटिक जल तरंग जैसा ॥ (पन्ना ९३)

भक्त रविदास जी ने समाज-सुधार के काफी काम किए। उन्होंने हक-सच का शंख बजाकर सोई हुई तथाकथित दलित जाति को जगाने का काम किया। जहां पर किसी को कोई चिंता न हो, कोई गम न हो, ऐसा एक समाज *"बेगम पुरा सहर को नाउ"* का स्वप्न संजोने का काम भी भक्त रविदास जी ने किया। ज्ञान के प्रकाश द्वारा इस अंधेरी दुनिया को रौशन किया। दीन-दुखियों को सीने से लगाया तथा शोषितों और पिछड़ों में नया जोश भरा :

नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ॥
(पन्ना ११०६)

एक ईश्वर की महिमा गाते हुए रहमत की ऐसी धारा बहाई कि संसार उनकी भक्ति का

लोहा मानने लगा। उस एक **'गोबिंद'** से ही सच्ची प्रीति करने की प्रेरणा दी। झूठी आरती की जगह प्रभु की सच्ची आरती गाई। नाम-सिमरन की कमाई को सच्ची कमाई बताया। जो कोई भी हरि जैसे हीरे को छोड़कर किसी अन्य पर आशा रखता है, आस्था रखता है, वह सीधा दोजक (प्रभु-चरणों) में जाता है।

हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस ॥
ते नर दोजक जाहिगे सति भाखै रविदास ॥
(पन्ना १३७७)

उन्होंने अपनी बाणी में फरमान किया है कि नम्रता वाला गुण महान् गुण होता है। उन्हें गुमान और घमंड तो छू तक न सके। उन्होंने नम्रता के शिखर को छू लिया था। तभी तो वे स्वयं के बारे में कहते हैं :

जाती ओछा पाती ओछा ओछा जनमु हमारा ॥
राजा राम की सेव न कीन्ही कहि रविदास चमारा ॥ *(पन्ना ४८६)*

वे अकाल पुरख के आगे विनती करते हुए कहते हैं :

मेरी संगति पोच सोच दिनु राती ॥
मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभाती ॥
राम गुसईआ जीअ के जीवना ॥
मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा ॥ *(पन्ना ३४५)*

बेहद बिगड़ चुके, खराब हो चुके समाज का सुधार करते हुए, समाज का पुनर्निमाण करते हुए, लोगों को ठीक राह पर चलने की प्रेरणा देते हुए, ऊंच-नीच व जातिगत तथा सामाजिक भेदभाव के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद करते हुए भक्त रविदास जी सन् १५२७ ई को परम ज्योति में समा गए। इनकी पावन बाणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में दर्ज है।

कविता

यह नया साल

हे वाहिगुरु!
लेकर आए यह नया साल
रोजगार की सौगात
महंगाई से निजात
भूखों के लिए दाल-भात
उजली-उजली प्रत्येक प्रभात
खिली-खिली प्रत्येक दोपहर
उम्मीदों पर खरी उतरती हर शाम
और हंसती-गाती प्रत्येक रात।
हे अकाल पुरख!
लेकर आए यह नया साल
अंधेरे मकानों के लिए रौशनी
तन्हा-तन्हा गलियों के लिए चांदनी
कांपते-ठिठुरते प्राणियों के लिए गर्मी
मर रही रूहों के लिए नई जिंदगी
दया, संतोष, सब्र लाए!
जुल्मो-जब्र से मुक्ति दिलाए!
हे सच्चे पातशाह!
इस नए साल का हो इस तरह आगाज़
कि नफरत से मुक्त हो हमारा समाज
चहुं ओर हो प्रेम-भाईचारे का राज
भ्रष्टाचार से मुक्त हो हमारा समाज
चहुं ओर हो ईमानदारी का राज
इस तरह आए यह नया साल!

भक्त रविदास जी और उनकी विचारधारा

*-स. बिक्रमजीत सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की संपादना करके श्री गुरु अरजन देव जी ने आध्यात्मिक जगत और समूचे संसार पर महान उपकार किया। पंचम पातशाह ने न केवल सिख गुरु साहिबान की ही बाणी को एकत्र किया बल्कि गुरमति विचारधारा की कसौटी पर खरी उतरने वाली अलग-अलग समय, क्षेत्रों, भाषाओं और जातियों से संबंधित भक्त साहिबान की बाणी को भी शामिल किया जिसके कारण इनकी रचना सुप्रसिद्ध हुई।

इन भक्त साहिबान ने परमात्मा के स्वरूप का वर्णन करते हुए मनुष्य को अवगुणों का त्याग कर निरोल एक हरि की उपासना का उपदेश दिया। उन्होंने मनुष्य को ऊंच-नीच, जात-पात, छल-कपट इत्यादि को त्याग कर सद्गुणों का प्रयोग करना सिखाया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में जिन भक्त साहिबान की बाणी दर्ज है, उन्होंने प्रभु-भक्ति के साथ-साथ समाज-सुधार में भी बहुमूल्य योगदान डाला।

भक्ति लहर के इन भक्त साहिबान में से भक्त रविदास जी का सम्माननीय स्थान है। भक्त रविदास जी भक्ति-लहर और गुरमति विचारधारा के ऐसे भक्त थे जो भक्ति की सर्वोत्तम अवस्था प्राप्त कर चुके प्रभु के सच्चे उपासक होने के साथ-साथ आत्मिक ज्ञान-अनुभव से प्रकाशित आत्मा, समदृष्टि के मालिक, सामाजिक चिंतक, दार्शनिक आगू और दबे-कुचले लोगों के मसीहा थे जिन्होंने अपनी बाणी में जात-पात और ऊंच-नीच के विरोधी भावों को इंकलाबी ढंग से खंडित किया।

भक्त रविदास जी तथाकथित चमार जाति से संबंध रखते थे और आपके पूर्वज मृत पशुओं को उठाने का काम करते थे। चमार जाति से संबंध होने का आप अपनी बाणी में भी जिक्र करते हैं :

—नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं ॥
(पन्ना १२९३)

—तुम सरनागति राजा राम चंद कहि रविदास चमारा ॥ *(पन्ना ६५९)*

आपका विवाह लगभग १३ वर्ष की आयु में लोना देवी से हुआ।

'शब्दार्थ श्री गुरु ग्रंथ साहिब' के अनुसार भक्त रविदास जी काशी के भक्त रामानन्द के शिष्य थे और भक्त कबीर जी के समकाली। भक्त रविदास जी को अपने समय के ब्राह्मण वर्ग से बहुत कष्ट सहना पड़ा जिसका कारण यह था कि उन्हें नीची जाति का समझा जाता था। भक्त रविदास जी की बाणी में भगवान को नीची कुल तथा निम्न जातियों के रक्षक के रूप में सहायता हेतु बहुत जोरदार शब्दों में पुकारा गया है। भक्त रविदास जी ने ऊंच-नीच, जात-पात के भेदभाव को तार्किक ढंग से खंडित करते हुए केवल प्रभु-भक्त को सभी से ऊंचा दर्जा दिया है :

पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ ॥ *(पन्ना ८५८)*

**२९४६/७, बाजार लोहारां, चौक लछमणसर, श्री अमृतसर।*

सन् १६०४ में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना करते वक्त भक्त रविदास जी की बाणी के ४० शबद १६ रागों में दर्ज किये हैं जिसका विवरण इस प्रकार है :

सिरीरागु १	
गउड़ी राग	५ (४ शबद, १ अष्टपदी)
आसा राग	६
गूजरी राग	१
सोरठि राग	७
धनासरी राग	३
जैतसरी राग	१
सूही राग	३
बिलावल राग	२
गोंड राग	२
रामकली राग	१
मारू राग	२
केदारा राग	१
भैरउ राग	१
बसंत राग	१
मलार राग	३

भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में प्रभु के सर्वव्यापक स्वरूप को व्यक्त किया है। भक्त रविदास जी अपनी बाणी में फरमाते हैं:

—सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भुोगवै सोई ॥
कहि रविदास हाथ पै नेरै सहजे होइ सु होई ॥
(पन्ना ६५८)

अर्थात् सभी तरफ एक स्वामी (परमात्मा) ही है जो सभी में कर्मों के आधार पर खेल खेल रहा है। भक्त रविदास जी परमात्मा की व्यापकता के बारे में संकेत करते हुए कहते हैं कि निरंकार हाथों से भी नजदीक है। जो कुछ वह चाहता है वही कुछ होता है। परमात्मा सब का रिजक-दाता है, वही इसको चला रहा है:

जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै ॥
सभ घट भीतरि हाटु चलावै ॥ (पन्ना ७९४)

अर्थात् हे जीव! तू उस व्यापक परमात्मा पर भरोसा पैदा कर जिसने तुझे इस संसार में भेजा है, जीवन दिया है। वह खुद तुम्हारे भीतर बैठा हुआ है। उसके आगे सिर्फ सच्चे दिल से फरियाद करने की ज़रूरत है।

भक्त रविदास जी ने उस व्यापक परमात्मा के एक से अनेक होने का अर्थात् इस संसार की रचना करके उसी में समाये होने की बात कही है :

एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ
आन रे आन भरपूरि सोऊ ॥ (पन्ना १२९३)

उपरोक्त इस सारे शबद में विचार प्रस्तुत किया है कि केवल परमात्मा ही अनेक रूप धारण कर पूरे संसार में समाया हुआ है। हे जीव! तू उस सर्वव्यापक अंतरयामी को अपने दिल के अंदर प्रकट करने का प्रयत्न कर। जब तेरा उसके साथ मेल हो जाएगा तो फिर तेरा आवागमन का चक्रव्यूह मिट सकेगा।

भक्त रविदास जी ने मनुष्य की असलियत से पर्दा उठाते हुए जीव को समझाया है कि असल में मनुष्य है क्या? इसका उत्तर उन्होंने अपनी बाणी में दिया है :

जल की भीति पवन का थंभा रकत बुंद का गारा ॥
हाड मास नाड़ी को पिंजरु पंखी बसै बिचारा ॥
(पन्ना ६५९)

भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में मनुष्य को हर तरह के बुरे अनैतिक कार्यों से रोका है। उनके अनुसार अगर जीव संसारी कार्यों में मदमस्त होकर परमात्मा को भुला दे तो उसका जीवन व्यर्थ ही चला जाएगा। भक्त

जी के अनुसार जो मनुष्य प्रभु-प्रेम और भक्ति से दूर है उसकी संसार में बनाई प्रतिष्ठा व्यर्थ है:

दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेकै ॥
राजे इंद्र समसरि ग्रिह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै ॥ (पन्ना ६५८)

आदि काल से ही मनुष्य छुआ-छूत, जात-पात, ऊंच-नीच जैसे विकारों में फंसा हुआ है, जिसका प्रभाव भक्त जी की समकालीन ब्राह्मण जाति के ऊपर विशेष रूप से था। जब जात का अभिमान करने वाले कुछ ब्राह्मण-जनों ने भक्त रविदास जी को तथाकथित नीची जाति का समझ कर उनके साथ लंगर (भोजन) ग्रहण करने से इंकार किया तो भक्त जी ने उनको समझाते हुए कहा :

नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं ॥
रिदै राम गोबिंद गुन सारं ॥
सुरसरी सलल क्रित बारुनी रे संत जन करत नही पानं ॥
सुरा अपवित्र नत अवर जल रे सुरसरी मिलत नहि होइ आनं ॥ (पन्ना १२९३)

अर्थात् जिस अकाल पुरख परमात्मा की ज्योति का प्रकाश एक चमार कहलवाने वाले के अंदर है वही ज्योति हरेक मनुष्य की आत्मा में विराजमान है।

आप ने समय के हालात को देखते हुए छुआ-छूत ऊंच-नीच, जात-पात का विचार रखने वाले लोगों को बहुत प्रभावशाली तरीके से समझाया है कि जिस जीव की छूत सारे जगत भाव संसार को लग जाती है अर्थात् जिन जीवों से तथाकथित ऊंची जातियों वाले नफ़रत करते हैं उन जीवों पे परमात्मा खुद कृपा करता है। नीचे से ऊंचा करता हुआ वह किसी से डरता नहीं। भक्त नामदेव जी, भक्त त्रिलोचन जी, भक्त सधना जी, भक्त सैण जी सभी भक्त साहिबान ने जात-पात का खंडन कर परमात्मा की स्तुति-गायन की है। भक्त रविदास जी ने उपदेश दिया कि परमात्मा सब कुछ करने वाला है और समर्थ है। वही सभी की रक्षा करता है। आप अपनी बाणी में फरमाते हैं :

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै ॥
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथै छत्रु धरै ॥१॥रहाउ॥
जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै ॥
नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ॥१॥
नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै ॥
कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरि जीउ ते सभै सरै ॥ (पन्ना ११०६)

भक्त रविदास जी ने मनुष्य को विषय-विकारों, बुरी आदतों का त्याग करने का उपदेश दिया है। उन्होंने मनुष्य को पांच विकारों काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का त्याग करने हेतु बहुत ही भावपूर्ण विचार पेश किया है :

म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंचर एक दोख बिनास ॥
पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस ॥
(पन्ना ४८६)

अर्थात् उपरोक्त जीवों में केवल एक-एक कमज़ोरी है, जैसे मृग कानों की कमज़ोरी के कारण शिकारी के मधुर संगीत की तरफ खुद बढ़ता चला आता है, मछली जीभ-रस की मारी मांस के टुकड़े के पीछे लग कर कांटे में फंस जाती है, भंवरा फूल की खुशबू में इतना मस्त हो जाता है कि उसे शाम को फूल के बंद होने का पता ही नहीं चलता, हाथी काम-वासना का मारा शिकारी की तरफ से बनाई कागज की हथनी की तरफ दौड़ता है और खड्डे में गिर

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

भक्त रविदास जी

*-स. सुरजीत सिंघ**

२१वीं सदी के वैश्वीकरण आधुनिक युग में जहां सर्वत्र अर्थ एवं व्यापार का प्रभाव है, प्रोद्यौगिकी, विज्ञान, परमाणु, असंतुलन एवं मानव अहंकार से विश्व में अराजकता एवं अशांति का निरंतर पासार हो रहा है, क्योंकि मानव-मन की अस्थिरता से अमंगल भावों का उद्भव हो अशांति का मुख्य कारण है। कहा जाता है कि यदि अपने अंदर ही शांति स्थापित हो जाये तो पूरा विश्व ही शांतिमय प्रतीत होने लग जाता है, किंतु इस हेतु मानव में त्याग, सेवा, सिमरन, नैतिक जीवन-मूल्य, भ्रातृत्व-भाव, मानवतावादी एवं समन्वयवादी दृष्टि का विकास होना परम आवश्यक है।

भक्त रविदास जी पन्द्रहवीं शताब्दी की भक्तमाला में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, क्योंकि उनके विचार श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की गुरमति विचारधारा के आध्यात्मिक, सामाजिक, धार्मिक एवं भक्ति-साधना से सम्बंधित सिद्धांतों से परिपूर्ण हैं। भक्त रविदास जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित की हुई अपनी बाणी में बनारस अथवा उसके आस-पास का निवासी होना एवं व्यवसाय चर्मकार स्वयं ही स्पष्ट कर दिया है :

मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा ॥ (पन्ना १२९३)

अल्पायु में ही भक्त रविदास जी विद्वान, परिश्रमी एवं ईश्वर-भक्ति में परिपक्व हो चुके थे। गृहस्थ जीवन में आपके ईश्वर-प्रेम और निरंतर भक्ति में लीन रहते हुये शुद्ध अर्जित कमाई में से स्वयं की रोजी-रोटी के अतिरिक्त सहानुभूति रखते हुये अन्य जरूरतमंदों की सहायता भी किया करते थे। भक्त जी आध्यात्मिक प्रतिभा के धनी होते हुये विनम्र, श्रमजीवी, संगीतज्ञ, उत्कृष्ट कवि, महान विचारक एवं आदर्शवादी थे। आपके निर्मल वचन हैं :

मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी ओछा जनमु हमारा ॥
तुम सरनागति राजा राम चंद कहि रविदास चमारा ॥ (पन्ना ६५९)

ब्रह्म-ज्ञान, समानता, ईश्वर-भक्ति, सेवा, ईमानदारी की श्रम-जीविका के वास्तविक सत्य एवं आध्यात्म के तत्वों को समाहित किए हुए श्री गुरु ग्रंथ साहिब, जिनकी अमृत-बाणी संजीवनी बूटी के प्रारूप में यदा-कदा-सर्वदा मानवता में प्राणों का नवसंचार कर रही है, में भक्त रविदास जी द्वारा रचित ४० शबद संग्रहित हैं। सद्गुण मानव को विकास की ओर अग्रसर करते हैं जबकि अवगुण बाधक बन अंधकारमय जीवन की ओर ले जाते हैं, इसलिये मनुष्य को अवगुणों का त्याग कर सद्गुणों को ग्रहण करना चाहिये, ताकि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी विकारों से बचा जा सके :

काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटे ॥ . . .
कहु रविदास सभै नही समझसि भूलि परे जैसे बउरे ॥ (पन्ना ९७४)

भक्त रविदास जी ने प्रेम, दया, सेवा,

**५७-बी, न्यू कालोनी, गुमानपुरा, कोटा (राजस्थान)*

परोपकार, विनम्रता के गुण अपनाने पर बल देते हुये *"मानव-मानव एक समान"* एवं *"हरि को भजै सो हरि का होइ"* का सिद्धांत प्रतिपादित किया है, जहां परमात्मा से प्रेमभाव दर्शाते हुये मानव-मात्र के अनुरूप सहानुभूति रख *"मन बच क्रम रस कसहि लुभाना ॥"* मन, वचन, कर्म से सद्मार्ग पर चलना है।

भक्त रविदास जी मध्य काल के क्रांतिकारी एवं समाज-सुधारक थे, जिन्होंने भूले-भटकों के हृदय परिवर्तित कर जनमानस में व्याप्त अंधविश्वासों एवं सामाजिक कुरीतियों को निर्मूल साबित कर प्रभु की सच्ची भक्ति से जोड़ा। आपने दिशा प्रदान की कि आनंदमयी जीवन के लिये मनुष्य को भ्रम, पाप, विकार, निंदा, आडंबर आदि दोषों से मुक्त रहना चाहिये। भक्त जी जन्म-आधारित वर्ण-व्यवस्था, ऊंच-नीच तथा भेदभाव के कट्टर आलोचक थे और वे उच्चता-नीचता का आधार भी मनुष्य का आचरण ही मानते थे। एकेश्वरवाद के अनुरूप सारे एक ही मिट्टी से बने हुये हैं और उन्हें बनाने वाला भी एक ही है, तो ब्राह्मण के घर जन्म लेने से न तो कोई वास्तव में ब्राह्मण हो जाता है और न ही शूद्र के यहां जन्म लेने से कोई शूद्र:

ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ॥ *(पन्ना ८५८)*

भक्त रविदास जी की शोभा सुनकर राजस्थान के प्रसिद्ध नगर चित्तौड़गढ़ के राजपूत झाला राज-परिवार राणा सांगा की रानी भी आपकी श्रद्धालु हो गई थी। एक समय की घटना है कि भक्त रविदास जी महारानी के आमंत्रण पर चित्तौड़गढ़ पधारे जहां कई ब्राह्मणों को भी भोजन हेतु बुलाया हुआ था। दलित मानते हुये ब्राह्मणों ने भक्त जी के साथ दुर्व्यव्यहार किया और साथ में भोजन करने से मना कर दिया। भक्त रविदास जी ने स्वाभाविक ही ब्राह्मणों के भोजन करने के पश्चात स्वयं भोजन ग्रहण करने को कह दिया। प्रभु ने ऐसा खेल बरताया कि भोजन के समय समस्त ब्राह्मणों को यह अनुभव हुआ कि दलित समझे जाने वाले भक्त रविदास जी, जिनका उन्होंने प्रबल विरोध किया था, वे प्रत्येक ब्राह्मण के साथ ही बैठकर भोजन ग्रहण कर रहे हैं। इसी प्रकार और भी कई साखियां आपकी प्रभु-नाम-भक्ति में ऊंची आत्मिक स्थिति का प्रमाण देती हैं। सामाजिक एवं सांसारिक रूप से चाहे वे निर्धन एवं दलित थे किंतु आध्यात्मिक पक्ष से बहुत अमीर एवं उच्चस्थ थे। गुरबाणी में माया, संसार, ईश्वर और मानव के परस्पर सम्बंधों को इस तरह से समावेश किया हुआ है कि वह स्वयं में मानवीय समाज के लिए सार्थक तथा लाभदायक बन गई है। मनुष्य की दशा इस प्रकार वर्णित है :

माटी को पुतरा कैसे नचतु है ॥
देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है ॥१॥रहाउ॥
जब कछु पावै तब गरबु करतु है ॥
माइआ गई तब रोवनु लगतु है ॥ (पन्ना ४८७)

भक्त रविदास जी की श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज पावन बाणी सामाजिक, धार्मिक, नैतिक मूल्यों से जोड़ती हुई समानता, आदर, आत्मीयता की परिधि में मधुभाषण, भक्ति, विनम्रता द्वारा उस परमोच्य अवस्था तक पहुंचाती है जहां दैहिक, भौतिक, दैविक का कोई काम, ताप, दुख नहीं रहता है और यही वैश्वीकरण युग में विश्व-शांति का स्रोत आदर्श है, जिसकी आज परम् आवश्यकता है और अनुसरणीय है।

अद्वितीय शख़्सियत भक्त रविदास जी

*-श्रीमती शैल वर्मा**

भक्त रविदास जी का जन्म काशी में हुआ माना जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में इनकी बाणी एक श्लोक सहित चालीस पदे प्राप्त हैं। इनके विषय भी भिन्न-भिन्न हैं। भक्त रविदास जी के अपने विषय में निसंगता भरे वाक्य विलक्षण हैं। भक्त जी द्वारा अपनी बाणी में अपनी जाति और व्यवसाय को नि:संकोच सामने लाया गया है। वे चमार कहलाने वाली जाति से संबंध रखते थे और चमड़े का कारोबार करते थे। उन दिनों बने-बनाये चमड़े नहीं मिलते थे। जानवरों के चमड़े घड़े में भिगोना, धोना, रंगना और जूते बनाना। ऐसे कारोबारी लोगों को 'प्रतिष्ठित' समाज में समता का स्थान नहीं था, किन्तु श्री गुरु ग्रंथ साहिब के विचारकों ने भक्त रविदास जी की बाणी तथा आचरण को परखा और सच्चे भक्त की श्रेणी में विराजमान कर दिया। धन्य हैं श्री गुरु अरजन देव जी जिन्होंने ऐसा महत्वपूर्ण कार्य किया।

भक्त रविदास जी कोमल स्वभाव के उदार व्यक्ति थे, किन्तु उदार होते हुये भी साहस के साथ ऊंच-नीच का विरोध उनका प्रमुख गुण था। अपने विवेक से उन्होंने बड़े-बड़े पंडित तथा विद्वान कहलवाने वालों को झुकने के लिये विवश कर दिया। '. . . रविदास दर्शन' नामक पुस्तक में माननीय स. पृथ्वी सिंघ आजाद द्वारा कहा गया है कि "भक्त रविदास जी जन्म-जात भक्त होते हुये भी एक महान दार्शनिक, क्रांतिकारी, समाज-सुधारक थे, किन्तु हृदय से अति कोमल होने के कारण जन-जन की पीड़ा देखकर वे सहज ही द्रवित हो जाया करते थे।"

भक्त रविदास जी का नाम भक्त रामानंद जी के प्रमुख शिष्यों में लिया जाता है। जाति-भेद के समर्थक ब्राह्मणों द्वारा इनकी काफी निंदा भी हुयी, फिर भी विद्वान ब्राह्मण इनको सम्मान की दृष्टि से देखते थे, क्योंकि इनके व्यवहार में धन-सम्पत्ति के प्रति उदासीनता दिखाई देती थी। वे धन-संग्रह तथा लोभ के वशीभूत होने की वृत्ति के सख्त विरोधी रहे।

भक्त जी समता और एकता के समर्थक थे। जात-पात के पाखंड को उन्होंने पूरी तरह से नकारा है। भक्त रविदास जी ने अपनी बाणी में सबको आपस में जोड़ने वाली विचारधारा बयान की है।

भक्त रविदास जी ने कर्मों के आधार पर वर्ण की व्याख्या की है। उन्होंने बताया है कि ब्रह्मवेत्ता अथवा काम, क्रोध, मद, लोभ आदि मानसिक विकारों को त्याग कर धर्मानुसार व्यवहार करने वाला ही वास्तव ब्राह्मण है। दीन-दुखियों तथा धर्म की रक्षा करने हेतु प्राण त्यागने को तत्पर व्यक्ति ही क्षत्रिय है, सच्चाई के साथ व्यापार करने वाला ही वैश्य है, अहंकार रहित होकर जड़-चेतन की सेवा करने वाला ही शूद्र है।

आज का वैज्ञानिक दृष्टिकोण यह बताता है कि स्त्री और पुरुष में कोई अंतर नहीं है। आज विश्व में कई प्रकार के संगठन स्त्री के अधिकारों से सम्बंधित बन चुके हैं। कई प्रकार

(शेष पृष्ठ ३९ पर)

***४८/८, सागर सदन, गांधी नगर, पुलिस चौकी के पीछे, बस्ती-२७२००१ (उ. प्र.) फोन:०५५४२-२८८५८२*

सतसंगति

-कैप्टन डॉ. मनमीत कौर*

सतसंगति या साधसंगति का आशय उत्तम संगति से है। 'सतसंगति' दो शब्दों से मिलकर बना है--'सत्' एवं 'संगति' अथवा उत्तम संगति। 'साध' वह परम पुरुष है जो अपने आप को 'परम सत्य' के साथ अभेद करके सारा जीवन लोक-सेवा में लगाता है। वह इतना शिष्ट व श्रेष्ठाचारी होता है कि किसी का दिल नहीं दुखाता बल्कि सरबत्त का भला मांगता है और संगति से तात्पर्य होता है मेल-मिलाप। इस प्रकार से साधसंगति से तात्पर्य है- श्रेष्ठ व्यक्तियों का मेल-मिलाप।

संगति चाहे जिस भी प्रकार की हो, उसका व्यक्ति पर प्रभाव अवश्य ही पड़ता है। बुरी संगति का परिणाम बुरा तथा अच्छी संगति का परिणाम हमेशा ही अच्छा होता है। संगति एक पारस के समान है जो लोहे के समान निम्न व कठोर मनुष्य के जीवन को भी सोने के समान कीमती बना देती है।

डॉ. सुरिंदर सिंघ (कोहली) के अनुसार--"भले पुरुषों की संगति को साधसंगति के नाम से जाना जाता है। संतों की इस संगति में मनुष्य का मन पवित्र हो जाता है।"

डॉ. जोगिंदर सिंघ के अनुसार--"संगति से अर्थ है मेल-मिलाप। साधसंगति से तात्पर्य है श्रेष्ठ पुरुषों का मेल-मिलाप। निर्गुण भक्ति में साधसंगति एक स्कूल का दर्जा रखती है जिसमें मनुष्य का सदाचारी, बौद्धिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक विकास होता है। आध्यात्मिक जीवन की सफलता का भेद साधसंगति से मिलता है।"

महान कोश में 'साधसंगति' का अर्थ 'नेक मुहब्बत या उत्तम लोगों की संगति' दिया गया है।

डॉ. जे. आर. मिश्र के अनुसार--"जिस प्रकार पत्थर के स्पर्श से लोहा कंचन में परिवर्तित हो जाता है उसी प्रकार पापी-जन भी साधसंगति के प्रभाव से शुद्ध होकर गुरमुख हो जाते हैं। जिस प्रकार लकड़ी के साथ लोहा भी पार हो जाता है, उसी प्रकार साधसंगति के साथ पापी-जन भी भवसागर से तर जाते हैं।"

डॉ. महिंदर कौर (गिल) के अनुसार--"साधसंगति करने का लाभ भी कम नहीं है। संसार रूपी अज्ञान को इन्हीं की संगत द्वारा पार किया जा सकता है। साधसंगति द्वारा निर्मल, उत्तम तथा धैर्य वाली बुद्धि मिलती है जिससे मन के विकार दूर हो जाते हैं तथा जीव जन्म-मरण के बंधनों से मुक्त हो जाता है।"

मनुष्य अनुकरणशील प्राणी है। अतः वह अपने आस-पास के लोगों से, सहचरों से कर्म सीखता है। किसी मनुष्य की प्रकृति क्या है, उसके स्वाभाविक गुण क्या हैं, उसका नैतिक, आध्यात्मिक और सामाजिक चरित्र कैसा है, किस विषय में उसकी अभिरुचि है, इन सभी बातों का ज्ञान हमें उसकी संगति से होता है। किसी महापुरुष का कथन है कि यदि किसी को मित्र बनाना हो तो उसके सहचरों को देखना चाहिए।

मनुष्य स्वभावतः संगतप्रिय होता है। इसी कारण मनुष्य से परिवार, परिवार से जाति, जाति से समाज, समाज से देश और देश से राष्ट्र बना। इस प्रकार से मनुष्य ही देश,

*विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, नवयुग कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजेन्द्र नगर, लखनऊ।

समाज और राष्ट्र का मूल है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अत: जाने-अनजाने में उस पर अपने आस-पास रहने वालों आस-पास के वातावरण का प्रभाव अवश्य पड़ता ही है। केवल ज्ञान या कोई अन्य साधन व्यक्ति का काया-कल्प नहीं कर सकता:

साध कै संगि आवहि बसि पंचा ॥
साधसंगि अंम्रित रसु भुंचा ॥ (पन्ना २७१)

श्रेष्ठ मनुष्यों की संगति में रहने से आदर की प्राप्ति होती है, अहंकार समाप्त हो जाता है तथा बुद्धि विकारों से रहित हो जाती है :

साध कै संगि मुख ऊजल होत ॥
साधसंगि मलु सगली खोत ॥
साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥ (पन्ना २७१)

मनुष्य का मन पांच विकारों से छुटकारा पा लेता है। वह लोभ-लालच से मुक्त हो जाता है तथा इसके साथ ही उसे दया, क्षमा, विनम्रता आदि सद्‌गुणों की प्राप्ति होती है। सतसंगति को गुरमति में संसार-रूपी भवसागर से पार उतरने का साधन भी माना गया है :

नाव रूप भइओ साधसंगु
भव निधि पारि परा ॥ (पन्ना ७०१)

इसलिए आध्यात्मिक जीवन के विकास के लिए जहां प्रभु-सिमरन तथा अन्य गुण आवश्यक हैं वहीं नेक व्यक्तियों की संगति भी अत्यन्त आवश्यक है। यह अनुभवात्मक सत्य है कि साधसंगति से मन की बुराइयों का नाश होता है। साधसंगति से व्यक्ति कंचन के समान शुद्ध हो जाता है :

पारस भए कंचन धात होई ॥
सत संगति की वडिआई ॥ (पन्ना ५०५)

साधसंगति से धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष चारों की प्राप्ति संभव है। लेकिन यदि इससे भी बड़ी प्राप्ति की इच्छा हो तो नम्र होना अत्यंत आवश्यक है। विनम्रता ही श्रेष्ठ मनुष्य का शृंगार होती है :

चारि पदारथ जे को मागै ॥
साध जना की सेवा लागै ॥
जे को आपुना दूखु मिटावै ॥
हरि हरि नामु रिदै सद गावै ॥
जे को अपुनी सोभा लोरै ॥
साधसंगि इह हउमै छोरै ॥
जे को जनम मरण ते डरै ॥
साध जना की सरनी परै ॥ (पन्ना २६६)

उत्तम संगति मनुष्य का सर्वपक्षीय विकास करती है :

ऊतम संगति ऊतमु होवै ॥
गुण कउ धावै अवगण धोवै ॥ (पन्ना ४१४)

फारसी के एक कवि ने संगति के फल के प्रभाव के सम्बंध में कहा है कि एक दिन हमाम में मेरे हाथ में एक खुशबूदार मिट्टी आई। मैंने उससे पूछा, "क्या तू कस्तूरी है? क्यों मैं तेरी खुशबू की ओर खिंचा जा रहा हूं?" उसने उत्तर दिया, "मैं तो मिट्‌टी ही थी, लेकिन एक लम्बे समय से एक फूल के पास बैठी थी। उसका जमाल मुझ पर प्रभाव छोड़ गया है, नहीं तो मैं मिट्‌टी ही हूं।"

सतसंगति के अनगणित लाभ हैं। इतिहास साक्षी है कि अच्छी संगति वाले महापुरुषों ने देश का इतिहास रचा है तथा समाज को एक नयी दिशा प्रदान की है। अंगुलिमाल जैसा डाकू भी सतसंगति के कारण पुण्यात्मा तथा श्रेष्ठ पुरुष बन गया। कुछ समय की अच्छी संगति भी व्यक्ति को सुमार्ग की ओर प्रेषित कर सकती है। यह बुरे से बुरे इंसान को भी आदर्श मानव बनाने की क्षमता रखती है। जहां अच्छी संगति मनुष्य को कल्याण-पथ की ओर ले जाती है वहीं बुरी संगति मानव के जीवन को कष्टप्रद तथा पीड़ादायक बना देती है। कुसंगति मानव

के विवेक को नष्ट कर देती है।

श्री गुरु अरजन देव जी की पावन बाणी 'सुखमनी साहिब' में साध-संत के मेल-जोल से आचरण में हुए विकास को भली-भांति उजागर किया गया है कि किस प्रकार से नये प्रकाशमयी जीवन का आरंभ होता है :

साध कै संगि मुख ऊजल होत ॥
साधसंगि मलु सगली खोत ॥
साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥ (पन्ना २७१)

गुरु के उपदेश तथा साधसंगति की प्रेरणा का परिणाम यह होता है कि बुराइयों का त्याग हो जाता है। वास्तव में ये बुराइयां, अवगुण तथा विकार ही हैं जो मानवीय आत्मा को मलीन करते हैं तथा अशुद्ध व अपवित्र आत्मा ईश्वर का आशीर्वाद प्राप्त नहीं कर सकती। जन्म-जन्मांतरों से ये विकार मनुष्य को मलीन करते रहे हैं :

बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥
झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह ॥
इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥
नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥
(पन्ना २६७-६८)

इसलिए सबसे पहले यह आवश्यक है कि आत्मिक शुद्धि की जाए। इस शुद्धि का मार्ग गुरु दिखाता है। साधसंगति से ध्यान उचित मार्ग पर लगता है :

सिख की गुरु दुरमति मलु हिरै ॥
गुर बचनी हरि नामु उचरै ॥
सतिगुरु सिख के बंधन काटै ॥
गुर का सिखु बिकार ते हाटै ॥ (पन्ना २८६)

प्राचीन भारत में बहुत से कर्म शरीर को कष्ट देने वाले इसलिए किए जाते थे कि शरीर वासना या भोग के लायक ही न रहे। बड़े-बड़े तप करना, भूखे-प्यासे रहना, नग्न रहना, जलधारा करना या अग्नि तापना आदि ये सब कार्य किए जाते थे। लेकिन शरीर को इतने कष्टों में डालकर भी मन को वश में नहीं किया जा सकता। यदि किसी का मन आंशिक रूप से नियंत्रित हो भी जाता तो वह अपनी पवित्रता या नेकी का दावा करके फिर अहंकार से मैला हो जाता। इसलिए गुरमति में इन कर्मकांडों को धर्म-साधना में अंश मात्र भी स्थान नहीं दिया गया। उसमें व्याख्या है कि समस्त धर्मों में सर्वश्रेष्ठ धर्म ईश्वर का सिमरन ही है तथा यही सबसे उत्तम कार्य है :

सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥
हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥
सगल क्रिआ महि ऊतम किरिआ ॥
साधसंगि दुरमति मलु हिरिआ ॥ (पन्ना २६६)

इस श्रेष्ठ धर्म की पाठशाला साधसंगति है कि जिसके द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है तथा अज्ञानता का अंधकार दूर हो जाता है। साधसंगति जीव को असत् से सत् तथा अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है। इसलिए गुरमति में बार-बार यही दृढ़ करवाया है कि समस्त प्रयासों में सर्वोत्तम प्रभु-नाम का जाप है। अहंकार का त्याग कर प्रभु-सिमरन किया जाए तभी आत्मा शुद्ध होती है तथा आत्मा की शुद्धि से ही सच्चे धर्म का ज्ञान होता है।

साधसंगति के द्वारा भक्ति की प्राप्ति भी होती है। 'सुखमनी साहिब' की सातवीं अष्टपदी में साधसंगति की विशेष महिमा बतायी गयी है। जैसे बियाबान जंगल में भटके हुए को मार्ग मिल जाता है उसी प्रकार से साधसंगति के द्वारा आत्मिक प्रकाश होता है :

जिउ महा उदिआन महि मारगु पावै ॥
तिउ साधू संगि मिलि जोति प्रगटावै ॥
(पन्ना २८२)

साधसंगति के द्वारा मनुष्य प्रभु का साक्षात

दर्शन करता है तथा साधसंगति में प्रभु का सिमरन करने से जन्म-मृत्यु से रहित हो जाता है और अमर पदवी को प्राप्त कर लेता है :

अमर भए अमरा पदु पाइआ ॥
साधसंगि नानक हरि धिआइआ ॥ (पन्ना २९३)

साधसंगति से अहंकार समाप्त होता है तथा उत्तम ज्ञान प्रकट होता है अर्थात् बुद्धि निर्मल हो जाती है :

साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥ (पन्ना २७१)

बुद्धि विकारों से रहित होती है। जन्मों से मनुष्य का मन अहंकार की मैल से धुंधला है, वह साधसंगति से साफ हो जाता है :

जनम जनम की हउमै मलु लागी
मिलि संगति मलु लहि जावैगो ॥ (पन्ना १३०९)

पांचों विकार दूर हो जाते हैं, किसी से भी वैर की भावना नहीं रह जाती, क्योंकि प्रत्येक में उसे प्रभु का रूप ही दिखायी देता है। इस प्रकार से आध्यात्मिक उच्चता की प्राप्ति होती है:

साधसंगि किस सिउ नही बैरु ॥
साध कै संगि न बीगा पैरु ॥
साध कै संगि नाही को मंदा ॥
साधसंगि जाने परमानंदा ॥ (पन्ना २७१)

साधसंगति से वैर-विरोध की भावना का अंत हो जाता है तथा सभी में एक प्रभु दिखायी देता है :

बिसरि गई सभ ताति पराई ॥
जब ते साधसंगति मोहि पाई ॥
ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ (पन्ना १२९९)

प्रो. प्यारा सिंघ 'पदम' के अनुसार भी श्रेष्ठ धर्म की पाठशाला साधसंगति है। अहंकार को त्याग कर प्रभु का सिमरन किया जाए तो आत्मा शुद्ध होती है तथा आत्मा की शुद्धि से ही सच्चे धर्म का ज्ञान होता है, सतिगुरु से और साधसंगति से।

सतसंगति इतनी अधिक प्रभावशाली होती है कि वह नैतिक गुणों से युक्त व्यक्ति को और अधिक गुणवान बनाती है तथा अवगुणी को भी गुणवान बना देती है। वह पतितों को पवित्र कर देती है, जिस प्रकार से चंदन के निकट वृक्षों में से भी सुगंध आने लगती है :

जिउ चंदन निकटि वसै हिरडु बपुड़ा तिउ सतसंगति मिलि पतित परवाणु ॥ (पन्ना ८६१)

साधसंगति व्यक्ति को अच्छे भाग्य से ही प्राप्त होती है। इस तरह के निर्मल व सद्‌गुणी आदर्श मनुष्य की संगति करने से परम पद की प्राप्ति होती है :

साध कै संगि सभ कुल उधारै ॥
साधसंगि साजन मीत कुटंब निसतारै ॥
(पन्ना २७१)

श्री गुरु नानक देव जी का कथन है कि जैसे पारस को छूकर लोहा सोना बन जाता है उसी प्रकार से सतसंगति से व्यक्ति भी उसी प्रकार का हो जाता है :

सतसंगति मिलि बिबेक बुधि होई ॥
पारसु परसि लोहा कंचनु सोई ॥ (पन्ना ४८१)

एक विद्वान कवि का कहना है :

सिंघन के बन मै बसीऐ धसीऐ,
जल में बिछुआ गहि लीजै।
कानखजूर प्रवेश कराइ के,
सांप के मुख में अंगूरी दीजै।
गिर ते गिरीए बिज से मरीए,
अर आरी के घाऊ अनेक महीजै।
ऐते ते कषट अनत सहो,
पर मूरख मीत को संग ना कीजै।

अर्थात् शेरों के जंगल में बसना, पानी में डूबना, कान में खजूरा पड़वा लेना, सांप के मुंह में उंगली देना, पेड़ से गिरना, बिजली से जलना तथा आरे से चीरा जाना आदि भारी

कष्ट तो उठा लो लेकिन मूर्ख मित्र की संगति न करो, क्योंकि इन कष्टों से तो शरीर ही दुखी होता है लेकिन कुसंगति से मन भ्रष्ट हो जाता है। प्रसिद्ध प्राचीन कवि कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में कहा है :

मन्दो अप्यमन्दतामेति संसर्गेण विपश्चितः।
पंकच्छिदः फलस्येव निकषेणाविलं पयः। (२/७)

अर्थात् विद्वानों की संगति से मूर्ख भी विद्वान बन जाता है, जैसे निर्मली के बीज से मटमैला पानी स्वच्छ हो जाता है।

नीच वृत्ति वाले पुरुषों का साथ करने से हमारी बुद्धि नष्ट होती है तथा उत्तम विचारों वाले पुरुषों का संग करने से उत्तरोत्तर श्रेष्ठ होती है।

सुसंगति एक ऐसा पारसमणि है जो लोहे को भी सोना बनाने की क्षमता रखती है। चंदन के समीप रहने से आस-पास के वृक्ष भी सुगंधित हो जाते हैं। जल की बूंद यदि गर्म तवे पर पड़े तो वह तत्क्षण मिट जाती है और यदि संयोग से यही बूंद सीप के मुख में गिरे तो वह उज्जवल मणि बनेगी। यही सतसंग की महत्ता है। एक छोटा-सा झरना सरिता में मिलकर उसके साथ हिलोर मारने लगता है। यदि यही झरना दलदल में, कीचड़ में मिल जाए तो जल मलिन हो जाएगा। उसे जल न कहकर गंदा पानी समझा जाएगा। परन्तु नदी में मिलकर वह ऐसी पावन-धारा बनेगा जिसे प्यासे अमृत समझकर पान करेंगे।

साधसंगति करने से जहां मानसिक विकार दूर होते हैं वहीं मनुष्य मनुष्य में निकटता उत्पन्न होती है, एक-दूसरे को सही ढंग से समझने का अवसर प्राप्त होता है, परस्पर सहयोग की भावना का विकास होता है। इस प्रकार से साधारण व सामान्य समाज अच्छे व उच्च समाज में बदल जाता है।

भक्त रविदास जी और उनकी विचारधारा

(पृष्ठ २३ का शेष)

जाता है। इन उदाहरणों के द्वारा केवल एक आदत से मजबूर जीवों का क्या हाल होता है यह भक्त जी बताते हुए कहते हैं कि हे जीव! तुम में तो पांचों विकार भरे पड़े हैं, तेरा क्या हश्र होगा?

अतः संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि भक्त रविदास जी ने मनुष्य को जात-पात का अभिमान छोड़कर एक परमात्मा की भक्ति का उपदेश दिया। उन्होंने मनुष्य को हर तरह के गलत काम से मिलने वाले नतीजे को पहले ही स्पष्ट किया।

उन्होंने फालतू के कर्मकांडों की जोरदार निंदा की जो कि मनुष्य को परमात्मा से जोड़ने की जगह तोड़ देते हैं। उनका केन्द्रीय विचार नाम-सुमिरन ही है।

भक्त रविदास जी की बाणी की प्रासंगिकता आज भी उतनी ही है जितनी पहले थी। आज आधुनिक युग में भी मानव जात-पात, क्षेत्रीय झगड़ों और असमानताओं में उलझा हुआ है, इसलिए भक्त जी की बाणी विश्व-शांति के लिए आज भी हमें प्रेरती है, क्योंकि यह मानवता को जोड़ती है, अशांत हृदयों को शांत करती है तथा पदार्थवादी युग में मनुष्य को माया का मोह त्यागने का उपदेश देती है। भक्त जी की बाणी मानवता को परस्पर प्यार का उपदेश देती है। भक्त रविदास जी ने किसी दूसरे की अधीनगी स्वीकार नहीं की, बल्कि केवल एक निरंकार को सर्वशक्तिमान मान कर उसकी सच्ची भक्ति का उपदेश दिया है।

सिक्ख धर्म में हिंसा-अहिंसा की अवधारणा

*-डॉ. महीप सिंघ**

दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने उनसे दो सौ वर्ष पूर्व प्रारंभ हो चुके सिक्ख-आंदोलन को एक नया रंग और रूप दिया था जो संत-स्वरूप के साथ ही सैनिक-स्वरूप को पूरा महत्व देता था। सिक्खों का बाद का इतिहास इतने अधिक संघर्षों से भरा हुआ है कि उनके जुझारू रूप ने उनके संत-स्वरूप को कुछ विश्लेषकों की दृष्टि से ओझल कर दिया। इसलिए एक धारणा यह बन गई कि अहिंसा की अवधारणा सिक्ख चरित्र के साथ बहुत सार्थक नहीं है।

अपने मूल-आदर्शों में सिक्ख धर्म पूरी तरह अहिंसक है, हिंसा से उसकी गहरी विरक्ति है। दया, करुणा, परदुख कातरता, सेवा उसके आधार हैं। किन्तु यह भी सच है कि हिंसा-अहिंसा के सम्बंध में उसकी अवधारणा सिक्खी सिद्धांत से अज्ञात या अल्प ज्ञान के धारकों के लिए अनेक बार विवादग्रस्त हो जाती है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु नानक देव जी की एक उक्ति है:

हंसु हेतु लोभु कोपु चारे नदीआ अगि ॥
पवहि दझहि नानका तरीऐ करमी लगि ॥
(पन्ना १४७)

इसका अर्थ है--हिंसा, मोह, लोभ और क्रोध, ये चारों आग की नदियां हैं। इनमें जो लोग गिर जाते हैं वे झुलसते हैं। सत्कर्मों से जुड़कर ही इनसे उबरा जा सकता है। पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी ने एक स्थान पर कहा है :

दूखु न देई किसै जीअ पति सिउ घरि जावउ ॥
(पन्ना ३२२)

वास्तव में सिक्ख गुरु साहिबान के सम्मुख हिंसा या अहिंसा मुख्य प्रश्न नहीं था। उनके सम्मुख न्याय और अन्याय, जुल्म और कातरता, सम्मान और अपमान, वीरता और कायरता, अहंकार और विनम्रता, जीवन और मरण जैसे गंभीर मुद्दे थे, जिन पर उन्होंने अपना व्यापक अभिमत दिया है और सिक्ख मानस का निर्माण लगभग इसी आधार पर हुआ है। गुरु नानक साहिब का सर्वव्यापक बिंब प्रेम, करुणा और मानवीय संवेदना से भरे हुए एक 'संत' का है। परन्तु अन्याय, अत्याचार और अपमान के प्रति उनका रुख काफी तीव्र है। अपने समय के अन्यायी शासकों और उनके कारिंदों के प्रति अपना रोष उन्होंने बड़े कड़े शब्दों में व्यक्त किया :

राजे सीह मुकदम कुते ॥
जाइ जगाइन्हि बैठे सुते ॥
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ ॥
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु ॥
जिथै जीआं होसी सार ॥
नकीं वढी लाइत बार ॥ (पन्ना १२८८)

तात्पर्य: आज के राजा व्याध के समान हैं। उनके कारिंदे कुत्तों के समान हैं, जो लोगों को बिना कारण पीड़ित करते रहते हैं। उनके नौकर पैरों के नाखूनों से लोगों को घायल करते रहते हैं और उनका लहू कुत्तों की तरह चाट जाते हैं। जहां इनके कर्मों की परख की जाएगी वहां इनकी नाक काट ली जाएगी।

इसलिए गुरु नानक साहिब लोगों को

**एच-१०८, शिवा जी पार्क, नयी दिल्ली-११००२६*

सम्मान के साथ जीने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं कि यदि तुम सम्मान खोकर जीते हो तो तुम्हारा खाना-पीना सब हराम है :

जे जीवै पति लथी जाइ ॥

सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ (पन्ना १४२)

गुरु नानक साहिब यह भी कहते हैं कि अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाना, सम्मान से जीने का अधिकार मांगना तो प्रेम का खेल है। तुम्हारे अंदर इस प्रकार का खेल खेलने का चाव है तो अपने सिर को हथेली पर रख कर इस रास्ते पर आओ। इस रास्ते पर सिर देना होगा पर उफ नहीं करनी होगी :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥

सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥

इतु मारगि पैरु धरीजै ॥

सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

आज हिंसा-अहिंसा की चर्चा करते हुए कुछ सिक्ख विद्वान श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के उस कथन का बहुत उल्लेख करते हैं जो उन्होंने औरंगजेब को फारसी में लिखे जफरनामा में कहा था:

चु कार अज़ हमह हीलते दर गुज़शत ॥

हलालस्सत बुरदन ब शमशीर दसत ॥

अर्थात् शांतिपूर्ण ढंग से किए सभी उपाय निष्फल हो जाएं तो हाथ में तलवार उठा लेना धर्म-सम्मत है।

इसलिए सिक्ख मानस सभी स्थितियों में अहिंसा का ही मार्ग अपनाने का समर्थक नहीं है। वह मानता है कि अन्याय को दूर करने के लिए पहले शांति के सभी रास्ते अपनाने चाहिएं। यदि शांतिपूर्ण उपाय असफल हो जाएं तो फिर तलवार का सहारा लेना उचित है। इसलिए सिक्ख इतिहास में शांतिपूर्ण उपायों का सहारा लेते हुए अन्याय का विरोध करना और उसके लिए अपने प्राण दे देने के अनेक उदाहरण हैं। पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी को जहांगीर ने बंदी बनाकर बड़े यातनापूर्ण ढंग से शहीद किया था। नौवें गुरु श्री गुरु तेग बहादर जी को दिल्ली के चांदनी चौंक में शहीद कर दिया गया था। इसे सिक्खों ने बड़ी शांति से सहन किया था और फिर अन्य उपाय न देखकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के नेतृत्व में सशस्त्र प्रतिरोध का मार्ग अपना लिया था। परन्तु उसके बाद जब कभी अहिंसात्मक ढंग से अन्याय का विरोध करने की स्थिति आई, सिक्खों ने लाठियां, गोलियां खाकर बड़े धीरज से सब कुछ सहा। सन् १९२०-२५ के मध्य पंजाब के ऐतिहासिक गुरुद्वारों को भ्रष्ट महंतों और पुजारियों के कब्जे से मुक्त कराने के लिए सिक्खों ने जो अहिंसात्मक आंदोलन किया था वह सम्पूर्ण देश को चकित कर देने वाला था। अकाली सत्याग्रही गले में कृपाण डाल कर सत्याग्रह करते थे। पुलिस उन पर बड़ी बेदर्दी से लाठियां बरसाती थी, परन्तु वे शांत खड़े रहते थे। सन् १९२२ में अमृतसर में 'गुरु का बाग' में जो मोर्चा लगा था उसकी चर्चा करते हुए डॉ. पट्टाभि सीता रामय्या ने 'कांग्रेस का इतिहास' में लिखा है--"सिक्खों के जत्थे अहिंसा का व्रत लिए पुलिस की टुकड़ियों के बीच में से निकलते और उन्हें गैरकानूनी समुदाय की हैसियत से खूब पीटा जाता। देश में इस दृश्य से सनसनी मच गई। यह अहिंसा का पाठ था, जो भारत की वह वीर जाति पढ़ रही थी जिसने यूरोप में जर्मनों से मोर्चे ले लिये थे और अंग्रेजों के निमित विजय प्राप्त की थी। अकालियों के इस आत्म-नियन्त्रण की प्रशंसा सरकार ने भी खुले दिल से की। दस वर्ष बाद भारतीय राजनीति में जिस लाठीचार्ज को इतनी प्रमुखता मिली उसकी कला में 'गुरु का बाग' में ही प्रवीणता प्राप्त की गई थी।"

हिंसा क्या है? किसी का वध करना, किसी को मारना, सताना, कष्ट या दुख देना, शारीरिक या मानसिक पीड़ा पहुंचाना। यह निश्चित है कि इस प्रकार का हिंसा-कार्य तभी हिंसा है जब वह किसी निरपराध या निरोह व्यक्ति के प्रति किया जाता है। किसी अत्याचारी, डाकू या कातिल की हत्या हिंसा नहीं है। युद्ध की स्थिति में किसी सैनिक द्वारा शत्रु पक्ष के सैनिकों की हत्या भी हिंसा नहीं है। परन्तु पराजित देश में निहत्थे सैनिकों या उस देश के सामान्य नागरिकों की हत्या करना या उन्हें यातनाएं देना निश्चित ही हिंसा है।

हिंसा की इस परिभाषा के प्रकाश में यह बात पूरे दावे के साथ कही जा सकती है कि सिक्ख धर्म में न केवल इस प्रकार की हिंसा निषिद्ध है, बल्कि अत्यन्त निकृष्ट कोटि की समझी जाती है। गुरु नानक साहिब ने यज्ञेपवीत संस्कार के समय पुरोहित से कहा था--"मुझे ऐसा जनेऊ पहनाइए जो दया की कपास, संतोष के सूत, यति की गांठ, सत्य की पूरना से बनाया गया हो :

दइआ कपाह संतोखु सूतु जतु गंढी सतु वटु ॥
एहु जनेऊ जीअ का हई त पाडे घतु ॥
(पन्ना ४७१)

श्री गुरु अरजन देव जी ने अपनी सुप्रसिद्ध बाणी 'सुखमनी साहिब' में कहा है कि मानव-मात्र की सेवा ही मनुष्य को संसार में निष्काम बना देती है :

सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

गुरबाणी में अनेक ऐसी उक्तियां हैं जिनमें इस बात पर आग्रह है कि व्यक्ति को सभी प्रकार के कष्ट स्वयं उठा लेने चाहिएं किन्तु अन्य किसी को कष्ट में नहीं डालना चाहिए। उसे स्वयं मृत्यु स्वीकार कर लेनी चाहिए किन्तु किसी को मारना नहीं चाहिए। तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी ने अपने एक पद में उनकी पहचान की है जो अहंकार में डूबे हुए हैं और माया में मदमस्त होकर सो रहे हैं। वे कहते हैं कि जागृत वह है जो आडंबरों का सहारा लेकर किसी को ठगता नहीं है, जो सद्गुरु की कृपा से पांचों विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) को अपने वश में कर लेता है। जागृत वह है जो मूल तत्व पर विचार करता है। वह स्वयं मरना स्वीकार कर लेता है किन्तु किसी को मारता नहीं। जागृत वही है जो एक ईश्वर को ही जानता है, जो माया को छोड़कर तत्व की पहचान करता है। चारों वर्णों में कुछ लोग ही ऐसे हैं जो इस जागृत स्थिति में होते हैं। ऐसे ही व्यक्ति यम रूपी काल से छूट जाते हैं। वही जागृत है जिसके नेत्रों में ज्ञान का अंजन लगा हुआ होता है। यह पूरा पद इस प्रकार है :

जोगी ग्रिही पंडित भेखधारी ॥
ए सूते अपणै अहंकारी ॥
माइआ मदि माता रहिआ सोइ ॥
जागतु रहै न मूसै कोइ ॥१॥रहाउ॥
सो जागै जिसु सतिगुरु मिलै ॥
पंच दूत ओहु वसगति करै ॥२॥
सो जागै जो ततु बीचारै ॥
आपि मरै अवरा नह मारै ॥३॥
सो जागै जो एको जाणै ॥
परकिरति छोडै ततु पछाणै ॥४॥
चहु वरना विचि जागै कोइ ॥
जमै कालै ते छूटै सोइ ॥५॥
कहत नानक जनु जागै सोइ ॥
गिआन अंजनु जा की नेत्री होइ ॥ (पन्ना ११२८)

पर-पीड़न सबसे बड़ी हिंसा है। सिक्ख धर्म आत्म-पीड़न तो स्वीकार कर लेता है , पर-पीड़न को कभी सहन या क्षमा नहीं करता।

रमईआ के गुन चेति परानी

*-डॉ. सत्येन्द्रपाल सिंघ**

विश्व में कितने ही धर्म हैं और हर धर्म के अपने अलग-अलग सिद्धांत हैं, जिनके अनुरूप उस धर्म को मानने वाले अपने इष्ट की पूजा-आराधना करते हैं। प्रत्येक धर्म सम्मानयोग्य है क्योंकि वह मनुष्य को परमात्मा से जोड़ता है और सत्य मार्ग पर चलने को प्रेरित करता है। सिख गुरु साहिबान ने अपनी विलक्षण दृष्टि से धर्म की नयी सोच समाज के सामने रखी जो प्रचलित परम्परा से एकदम हटकर थी। उन्होंने पूजा-उपासना की न कोई विशेष विधि बतायी और न ही प्रचलित विधियों में से किसी एक को मान्यता दी। उन्होंने नाम-सिमरन पर बल दिया, जिसका न कोई विशेष ढंग रखा, न कोई खास स्थान और काल बताया। गुरु साहिबान के अनुसार तो परमात्मा घट-घट में व्याप्त है:

घटि घटि रमईआ मनि वसै किउ पाईऐ कितु भति ॥
गुरु पूरा सतिगुरु भेटीऐ हरि आइ वसै मनि चिति ॥ *(पन्ना ८२)*

परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है, मन में बसता है किन्तु उसे पाने का कोई ढंग तो होना ही चाहिये। यह ढंग है परमात्मा के नाम का सिमरन। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी अपनी अमूल्य बाणी में परमात्मा के गुणों का स्मरण करने की बात करते हैं। श्री गुरु अरजन देव जी ने ही गुरु साहिबान, भक्त साहिबान, भट्ट साहिबान, गुरु-घर के निकटवर्ती सिखों की बाणी को एक स्थान पर संयोजित कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब का स्वरूप प्रदान किया था और उसमें अपनी बाणी को भी अंकित किया था। यह एक बड़ा ही दुष्कर और महान कार्य था। उन्हें एक तरह से पूर्व के चार गुरु साहिबान के विचारों को व्यापकता प्रदान करने वाला भी कहा जा सकता है और यह उनकी बाणी में भी झलकता है। वे कहते हैं कि मनुष्य ऐसा नाम सिमरन करे कि मन परमात्मा की प्रीति से खिल उठे :

प्रीति पारब्रहम मउलि मना ॥
गिआनु कमाईऐ पूछि जनां ॥
सो तपसी जिसु साधसंगु ॥
सद धिआनी जिसु गुरहि रंगु ॥२॥
सो निरभउ जिन्ह भउ पइआ ॥
सो सुखीआ जिसु भ्रमु गइआ ॥
सो इकांती जिसु रिदा थाइ ॥
सोई निहचलु साच ठाइ ॥३॥ *(पन्ना ११८०)*

इस दुनिया में कौन सुखी है, कौन ज्ञानी है, कौन निर्भय है, कौन साधक है आदि-आदि सवालों का उत्तर श्री गुरु अरजन देव जी बड़े ही सहज ढंग से अपने उपरोक्त वचनों में देते हैं। वे कहते हैं कि जो साधसंगत करता है वही तपस्वी है। जो परमात्मा के प्रेम में रंगा हुआ है वही साधक है। जिसके सारे भ्रमों का निवारण हो गया और जो एक परमात्मा को सच, स्थिर मान रहा है वही इस संसार में सुखी है। जिसे सच का आधार मिल गया है बस वही भटकावों से मुक्त हो गया है। गुरु साहिब

**इ-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७ मो: ९४१५९-६०५३३*

एक तरह से मनुष्य के सामने कसौटी रख देते हैं ताकि वह स्वयं आत्म-विश्लेषण करके अपनी स्थिति के बारे में जान सके। ये मनुष्य के सच्चे गुण हैं जो उसे परमात्मा के मार्ग पर चलने योग्य बनाते हैं। ये गुण तो परमात्मा की शरण में जाने से ही प्राप्त हो सकते हैं :

तउ मै आइआ सरनी आइआ ॥
भरोसै आइआ किरपा आइआ ॥ (पन्ना ७४६)

शरण में जाकर परमात्मा से उसी के नाम का आधार मांगना है :

सतिगुर पासि बेनंतीआ मिलै नामु आधारा ॥
तुठा सचा पातिसाहु तापु गइआ संसारा ॥१॥
भगता की टेक तूं संता की ओट तूं सचा सिरजनहारा ॥२॥ (पन्ना ७४६)

परमात्मा के नाम का आधार मिलते ही सारे संताप मिट जाते हैं क्योंकि उसी का अवलम्बन अन्ततः सहायक है। शेष सारे आधार ज्ञान, कौशल व्यर्थ हैं। परमात्मा तो माता, पिता और भाई की तरह सहायक है। उससे उसकी कृपा की याचना एक दास की तरह करनी होगी:

दास तेरे की बेनती रिद करि परगासु ॥
तुम्हरी क्रिपा ते पारब्रहम दोखन को नासु ॥१॥
चरन कमल का आसरा प्रभ पुरख गुणतासु ॥
कीरतन नामु सिमरत रहउ जब लगु घटि सासु ॥१॥रहाउ॥
मात पिता बंधप तूहै तू सरब निवासु ॥
नानक प्रभ सरणागती जा को निरमल जासु ॥२॥
(पन्ना ८१८)

परमात्मा से याचना यह करें कि हृदय ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित हो और परमात्मा की कृपा से सारे अवगुणों का नाश हो। अवगुणों का नाश ही सद्‌गुणों की प्राप्ति की ओर कदम है। परमात्मा की शरण में इसलिये भी जायें क्योंकि वह महान है। परमात्मा की महानता है कि वह मनुष्य पर हरेक पल कृपा कर रहा है। मनुष्य का यह कर्त्तव्य है कि वह हर पल उस कृपा के लिये परमात्मा का आभारी हो और परमात्मा के जो गुण उसकी कृपा के रूप में प्रकट हो रहे हैं उसका स्मरण करते हुए परमात्मा से प्रीति बढ़ाये :

जिह प्रसादि छतीह अंम्रित खाहि ॥
तिसु ठाकुर कउ रखु मन माहि ॥
जिह प्रसादि सुगंधत तनि लावहि ॥
तिस कउ सिमरत परम गति पावहि ॥
जिह प्रसादि बसहि सुख मंदरि ॥
तिसहि धिआइ सदा मन अंदरि ॥
जिह प्रसादि ग्रिह संगि सुख बसना ॥
आठ पहर सिमरहु तिसु रसना ॥
जिह प्रसादि रंग रस भोग ॥
नानक सदा धिआईऐ धिआवन जोग ॥
(पन्ना २६९)

श्री गुरु अरजन देव जी के वचन हैं कि एक परमात्मा ही तो स्मरण करने योग्य है। वास्तव में शेष सभी तो मिथ्या है, नाशवान है, सीमित है। उसकी कृपा से ही मनुष्य का जीवन सम्भव हुआ है। वह दैनिक कार्य-व्यवहार करते हुए सुख भोग रहा है। मनुष्य आठों पहर उसका सिमरन करे क्योंकि आठ पहर उस परम पिता की कृपा किसी न किसी रूप में उस पर बरस रही है। यह कृपा माता के गर्भ के पलने से लेकर जीवन की अंतिम सांस तक बनी रहती है।

परमात्मा की कृपा क्योंकि सदा बरस रही है, वह स्वयं चिन्ता कर रहा है, पालन-पोषण कर रहा है तो उससे कुछ मांगना कैसा? सांसारिक उपलब्धियों का जीवन में क्या अर्थ है जो टिक कर रहने वाली नहीं हैं। इनमें सुख

निहित नहीं है। अपना जीवन सांसारिक प्राप्तियों की चिन्ता और जुगत में क्यों व्यर्थ करें? मस्तक पर लिखे लेख अमिट हैं। करना है तो परमात्मा का सिमरन करें, उसकी महिमा का गायन करें जो फलदायी है :

गोबिंद गुण गावण लागे ॥
हरि रंगि अनदिनु जागे ॥
हरि रंगि जागे पाप भागे मिले संत पिआरिआ ॥
गुर चरण लागे भरम भागे काज सगल सवारिआ ॥ (पन्ना ७७८)

मनुष्य परमात्मा की महिमा का ध्यान धरता है और महिमा का गायन करता है तो उसका अंतर परमात्मा के प्रकाश से प्रकाशित हो उठता है और उसे सत्य का बोध होने लगता है। मनुष्य की चेतना जागृत होने से परमात्मा पर उसका विश्वास दृढ़ हो जाता है और वह सारे भ्रमों से दूर होकर अपने वास्तविक जीवन लक्ष्य अर्थात् परमात्मा मिलन की ओर बढ़ पाता है :

सार भूत सति हरि को नाउ ॥
सहजि सुभाइ नानक गुन गाउ ॥६॥
गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ॥
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ॥
होहि अचिंतु बसै सुख नालि ॥
सासि ग्रासि हरि नामु समालि ॥ (पन्ना २८९)

इस सृष्टि का सारतत्व परमात्मा है जिसके गुण सहज अवस्था में अर्थात् बिना किसी लोभ-मोह के गाने से आत्मा पवित्र हो जाती है, और अहंकार का भरा हुआ विष नष्ट हो जाता है जिससे मनुष्य की सारी चिंताएं स्वत: ही दूर हो जाती हैं। एक अभिमानी मनुष्य कभी भी किसी अन्य के गुणों की प्रशंसा नहीं कर सकता और न ही उनमें विश्वास कर सकता है। इससे वह स्वयं को सदैव उद्विग्न और असुरक्षित महसूस करता रहता है। गुणों का सागर तो परमात्मा ही है। उसके गुणों को देखने से अपने अवगुण दिखने लगते हैं और अहम का नाश होता है। एक परमात्मा ही है जिसकी महिमा वर्णन योग्य है:

एको जपि एको सालाहि ॥
एकु सिमरि एको मन आहि ॥
एकस के गुन गाउ अनंत ॥
मनि तनि जापि एक भगवंत ॥ (पन्ना २८९)

एक परमात्मा ही मन में रहे और तन-मन से उसका सिमरन करें। वह तो अनंत गुणों का स्वामी है जिनका वर्णन करना सम्भव नहीं है। मनुष्य सब कुछ भूल जाये किन्तु परमात्मा को कभी भी अपनी चेतना से परे न करे :

सभे गला बिसरनु इको विसरि न जाउ ॥
धंधा सभु जलाइ कै गुरि नामु दीआ सचु सुआउ ॥
आसा सभे लाहि कै इका आस कमाउ ॥
जिनी सतिगुरु सेविआ तिन अगै मिलिआ थाउ ॥१॥
मन मेरे करते नो सालाहि ॥
सभे छडि सिआणपा गुर की पैरी पाहि ॥
(पन्ना ४३)

गुरु साहिब परमात्मा को कर्त्ता की संज्ञा देते हैं और उसकी शरण में जाकर उसके गुणों का गायन करने की बात करते हैं। वे कहते हैं कि मनुष्य सारी इच्छाएं त्याग कर बस यही एक आशा मन में रखे, तभी जीवन सफल है।

भूख और तृप्ति

-ज्ञानी संत सिंघ जी मसकीन

अनगिनत भूखों का मजमूआ (संग्रह) मानव शरीर है। फिर सारा जीवन उन भूखों को तृप्त करने में लग जाता है। जब एक भूख की पूर्ति होती है तो कई-कई भूखें जन्म ले लेती हैं और इन भूखों में ही एक दिन जीवन का अंत हो जाता है।

पदार्थ का सारा रस भूख में ही छिपा पड़ा है, यथा:

. . . भुखै सादै गंढु ॥ (पन्ना १२८८)

भूख और पदार्थ के रस का चोली-दामन का साथ है। दो दिन का भूखा मनुष्य जो सूखी रोटी में स्वाद महसूस करता है वह तृप्त मनुष्य छत्तीस प्रकार के भोजन में भी आनंद नहीं प्राप्त कर सकता।

बे-औलाद इंसान जो तीर्थों पर, संतों की कुटिया में एक पुत्र की प्राप्ति के लिए भटक रहा है अगर कहीं उसके घर में एक पुत्र हो जाए तो उसकी खुशी को नापना कठिन है, पर जिसके घर पहले ही पांच पुत्र हों उसके घर एक और पुत्र हो जाए तो वह इस घटना को अति कष्टदायक समझता है। नंगे मनुष्य को एक खादी का कुर्ता जो प्रसन्नता दे जाता है वह प्रसन्नता उसको नसीब नहीं हो सकती जिसके पास कपड़ों के सूटकेस भरे पड़े हों।

इन कुछ उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हुई कि भूख का और रस का आपसी गहरा जोड़ है। भूख सारे जानदार जीवन के अंदर पाई जाती है लेकिन भूख की पूर्ति हर जानदार अलग-अलग वस्तुओं से करता है। पक्षी, कीड़े-मकौड़े, पशु, चौपाए सबके जीवन में भूख है। पर कोई तृण खाकर, कोई दाने चुग कर और कोई मांस खाकर अपनी भूख की पूर्ति करता है।

इसी तरह सारे मानव जीवन के अंदर भी भूख है, पर हर मनुष्य अपनी भूख की तृप्ति अलग-अलग पदार्थों से करता है। पंजाब का निवासी जितने शौक से गेहूं खाता है, मद्रास, केरल और बंगाल का रहने वाला अपना शौक चावल खाने में रखता है। मध्य भारत का कुछ हिस्सा ज्वार और बाजरा बहुत शौक से खाता है।

इस तरह प्यास सारे जीवन में है। कोई कुएं का और कोई सरोवर का जल पीकर अपनी प्यास शांत करता है, कोई घर के नल से और कोई नदी या झरने का जल पीकर अपनी प्यास दूर करता है। प्यास सारे जीवन में है, पर पानी अलग-अलग जगह का है। भूख सब में एक जैसी है, पर भोजन अलग-अलग है। शरीर ढकने की रुचि भी हर मनुष्य में है, पर कपड़े पहनने का ढंग अलग-अलग है। इसी तरह धन-धर्म की भूख भी सारे जीवन में है, पर धर्म कमाने का तरीका आज तक एक-सा नहीं हो सका। कोई दुकानदारी और कोई नौकरी कर धन कमा रहा है। कोई खेतीबाड़ी और कोई व्यापार करके धन कमा रहा है। कोई नमाज पढ़ कर, कोई पूजा-पाठ करके, कोई जप-तप करके धर्म कमाने में लगा हुआ है।

भोजन की भूख जिस मनुष्य को न लगे उसको रोगी समझा जाता है। आध्यात्मिक तौर पर वह भी रोगी है जिसको धर्म की भूख नहीं है। दरअसल भूख का न लगना ही रोगों की निशानी है। मनुष्य की शारीरिक तथा मानसिक भूखों के नीचे धर्म की भूख छुपी पड़ी है। यह भूख जागृत हो सके इसलिए कथा-कीर्तन का

'चूरन' लेना जरूरी है। आध्यात्मिक भूख जब पैदा हो जाती है तब सारे दुखों का अंत हो जाता है:

साचे नाम की लागै भूख ॥
उतु भूखै खाइ चलीअहि दूख ॥ (पन्ना ९)

हर भूख एक दुख को जन्म देती है। धन की भूख है तो दुख है, रोटी की भूख है तो दुख है, औलाद, मकान या प्रभुता की भूख है तो दुख खड़ा है। भूख और दुख हमेशा इकट्ठे रहते हैं, पर एक भूख प्रभु के नाम की ऐसी है अगर कहीं मनुष्य-जीवन में पैदा हो जाए तो सारे दुखों का अंत कर सकती है।

कोई भी पदार्थ केवल उसी भूख की तृप्ति कर सकता है जो भूख उस पदार्थ के लिए पैदा हो, पर 'नाम' (प्रभु-सिमरन) सब भूखों का अंत कर सकता है, इससे सब दुखों का अंत हो जाता है।

अद्वितीय शख़्सियत भक्त रविदास जी

(पृष्ठ २६ का शेष)

के वैधानिक नियम प्रयोग में लाये जाते हैं जो स्त्रियों के पक्ष में माने जाते हैं। प्राचीन काल में लोग शिक्षा प्राप्त करने 'गुरु-गृह' अथवा 'आश्रम' में जाया करते थे। वहां नैतिक शिक्षा प्राप्त करते थे, अपने मन को नियंत्रित करते थे और स्त्रियों का सम्मान स्वत: करते थे। बीच में यह व्यवस्था बिगड़ती गयी। भक्त रविदास जी ने स्त्रियों पर दया-भाव का प्रचार किया। आप जी ने उन पर होने वाले अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाई। भक्त रविदास जी बचपन से महापुरुषों, संत-महात्माओं, विचारकों की सेवा एवं भक्ति-भावना में लीन रहते थे। चित्तौड़ की भक्तनी मीरा बाई तथा तत्कालीन प्रसिद्ध पुरुष उनके शिष्य बन गये थे। वे कतरनी से चमड़ा कतर कर खूबसूरत तथा मजबूत जूते बनाते थे और साथ ही ज्ञान और जुबान से पाखंड को खंड-खंड करके मनुष्य में निहित बुराइयों को समाप्त करके उसे सही रास्ता दिखाते थे। सच्चे मनुष्य उनके शिष्य बनते जाते थे। कुछ कट्टरवादी अहंकारी ब्राह्मण उनसे चिढ़ते भी थे।

भक्त रविदास जी ने ऊंच-नीच, शगुन-अपशगुन एवं धार्मिक अंधविश्वासों की सख्त आलोचना की। उन्होंने मानवीय एकता एवं भाईचारे का उपदेश सामान्य जनमानस के हृदय में दृढ़ करवाया। तीक्ष्ण बुद्धि होने के कारण वे समझ लेते थे कि कौन-सा सच्चा मत है और कौन-सा पाखंड है। पाखंडियों को सच्चाई की ओर लाने में भक्त रविदास जी ने तन, मन और धन लगाया। तन और मन से तो वे समर्पित थे किन्तु वे धन संग्रह नहीं करते थे। वे "तुरंत दान-महा कल्याण" की नीति पर चलते थे। गुरमति में दान का अधिक उल्लेख नहीं मिलता किन्तु "वंड छको" (बांट कर खाओ) सिक्ख धर्म का सुनहरा सिद्धांत है और इस सिद्धांत का भक्त रविदास जी पालन करते थे। तभी तो माननीय श्री गुरु अरजन देव जी ने उनकी बाणी को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में समुचित स्थान दिया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अपनी बाणी संकलित करवाने के लिये तत्कालीन विद्वान कहलाने वालों और राजाओं-महाराजाओं ने बहुत सारे उपाय किये किन्तु उन्हें अवसर नहीं दिया गया। ऐसे अपूर्व गुणों के कारण ही तो श्री गुरु ग्रंथ साहिब ने विश्व-साहित्य में अपना सबसे विलक्षण स्थान प्राप्त किया है। कवि सौंधा ने अपने विचार इस प्रकार प्रस्तुत किये :

गुर नानक जग महि, इहु कीना उपकार।
अक्षर का पुल बांधि कै, ग्रिसट उतारी पार।

सिक्ख साहस का प्रतीक : बड़ा घल्लूघारा

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

सिक्ख इतिहास में दो घल्लूघारे हुए हैं। पहला घल्लूघारा जिसको छोटा घल्लूघारा कहा जाता है, १७४६ ई में काहनूवान (जिला गुरदासपुर) के छंभ में में हुआ, जिसमें लगभग दस हजार सिक्ख शहीद हुए थे। मलेरकोटला के पास घटित हुए बड़े घल्लूघारे में लगभग तीस हजार सिक्ख शहीद हुए थे। सिक्ख कौम के लिए यह बहुत बड़ा नुकसान था, जिसमें इतनी बड़ी संख्या में सिक्खों ने जानें न्योछावर कीं।

बड़ा घल्लूघारा की भयंकर जंग ५-८ फरवरी, १७६२ ई में "कुप रोहीड़ा" के मैदान से गहिलां तक के २० मील के क्षेत्र में लड़ी गई थी। अहमदशाह अबदाली भारत पर पांच हमले कर चुका था। हरेक हमले में उसने भारत में बहुत लुट-मार की। जब वह १७६१ ई में पांचवां हमला करके वापिस जा रहा था तो सिक्खों ने उस पर हमला करके बहुत-सा लूट का माल छीन लिया था। उस समय भारत में मुगल सरकार बहुत कमजोर हो चुकी थी। अहमदशाह अबदाली जब अटक दरिया पार कर गया तो सुलतान-ए-कौम सरदार जस्सा सिंघ आहूलवालिया ने लाहौर पर अधिकार कर लिया और पहली खालसाई करंसी जारी की जिस पर श्री गुरु नानक देव जी और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पावन नाम अंकित थे। जब इस की खबर अहमदशाह अबदाली के पास पहुंची, उसने सिक्ख शक्ति को खत्म करने के लिए भारत पर छठा हमला किया। यह छठा हमला केवल सिक्खों को खत्म करने के हेतु ही किया गया था। उस समय सिक्खों की ताकत काफी मजबूत थी। बारह मिसलों में सिक्ख सरदारों की चढत कायम थी। दल खालसा के सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया की अगुआई में सिक्खों की ताकत बहुत मजबूत हो चुकी थी।

अहमदशाह अबदाली के इस हमले की सूचना सिक्खों को भी मिल गई थी। दल खालसे के प्रमुख जरनैल सरदार जस्सा सिंघ आहूवालिया, सरदार जस्सा सिंघ रामगढिया, सरदार शाम सिंघ, सरदार चढ़त सिंघ आदि ने भी इधर बचाव की जितनी तैयारी हो सकी कर ली। इस बार अबदाली क्रोध में भरा हुआ था और हर हालत में सिक्खों को खत्म करना चाहता था। अबदाली के जरनैलों ने सिक्खों पर भयंकर हमला कर दिया। सिक्ख फौजों ने भी इतने जोश और साहस के साथ हमला किया कि अबदाली की फौजें तोबा-तोबा कर उठीं। वास्तव में अबदाली को इतनी उमीद नहीं थी, जितना बड़ा नुकसान सिक्ख शूरवीरों ने, कुछ ही समय में कर दिया था। अबदाली के बहुत से सिपाही मर गए। यह देख कर अबदाली जिसके पास भारी फौज थी, ने जोरदार हमला किया और बहुत से सिंघों को शहीद कर दिया। अब सिक्ख जरनैलों ने नई जंग-नीती बना कर ऐसा जोरदार हमला किया कि अबदाली को नानी याद करवा दी। दुश्मन फौजों की लाशों के ढेर लग गए। इस भंयकर जंग में सिंघों ने ऐसे

*पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केन्द्र, गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५२१

जौहर दिखाए कि जिसका उदाहरण देना कठिन लगता है। अबदाली की फौजों का भी इतना नुकसान हुआ कि उसके सभी बड़े-बड़े जरनैल मारे गए। चारों ओर लाशों के ढेर लगे हुए थे। कहा जाता है कि दल खालसा के मुखी सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया के शरीर पर २२ गहरे जख्म थे और सरदार चढ़त सिंघ के शरीर पर १९ जख्म थे। फिर भी यह बहादुर जरनैल निर्भीकता से लड़ते जा रहे थे और खुद चढ़दी कला में थे और बाकी सिंघों को और अधिक शक्ति के साथ हल्ला करने को ललकार रहे थे। यह जंग २० मील के क्षेत्रफल में हुआ, इसमें अबदाली की फौजों ने सिक्खों का बहुत बड़ा नुकसान किया। बच्चे, बूढ़े, औरतें, जवान, बीमार किसी को भी उन्होंने नहीं छोड़ा। भयंकर जंग हुई, जो भी सामने दिखा सभी को खत्म कर दिया। चारों ओर खून की नदियां बह गईं। अबदाली की फौज भी काफी मर गई थी। जंग खत्म हुई। बचे हुए सिंघों ने गुरबाणी का पाठ पढ़ कर अरदास की और हुए बड़े नुकसान को वाहिगुरु का हुक्म करके जाना-माना। ८ फरवरी, १७६२ ई को यह भंयकर जंग हुई।

इस घल्लूघारे के पश्चात अबदाली जब श्री हरिमंदर साहिब, दरबार साहिब श्री अमृतसर की इमारत को बारूद से उड़वा रहा था उस समय वो घोड़े पर सवार होकर श्री दरबार साहिब परिक्रमा में ही फिर रहा था। श्री हरिमंदर साहिब की एक ईंट उड़कर अबदाली के नाक पर लगी, जिससे बाद में नासूर बनकर इस पापी अबदाली की मौत हो गई।

अबदाली की मौत के बाद सरदार जस्सा सिंघ आहलूवालिया की अगुआई में दल खालसा बहुत शक्तिशाली हो गया जो बाद में महाराजा रणजीत सिंघ के रूप में महान सिक्ख शक्ति के रूप में प्रकट हुआ, जिसने सिक्ख राज अथवा खालसा राज की नींव रखी। इस प्रकार बड़ा घल्लूघारा सिक्ख इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है जिससे सिक्ख कौम एक बार बड़ी मात्रा में शहीद होकर फिर जीवित हो उठी।

कविता

महा नूर के संग

कैसी है यह अवस्था आई।
जीवन की जैसे शाम हो भाई!
बुद्धि इसे बुढ़ापा है कहती।
जीवन-नदियां सूखने लगतीं बहती-बहती।
जीवन की शक्ति, कहीं खो जाती।
बिजली हाथ पांव में सो जाती।
कानों को जलतरंग कैसे, कोई सुनाये!
नूर आंखों का कैसे, वापस आये?
काले केश हो जाते हैं दूधवानी।
बुढ़ापे की बन जाती, पक्की निशानी।
बहुत दूर छूट गई, अम्मी की लोरी।
अब तो कांपे हाथ, औ पकड़ी डंगोरी।
जिस मन ने किया जप-जापन।
जिस तन ने किया आराधन।
जीवन सफर में आत्म रहत बनाई।
तन-मन में आ जाती है रोशनाई।
साधक मन कभी भी बूढ़ा नाही।
हरदम हरि प्रभु-गुण गाई।
किरत-कर्म शोभामयी, अंतर-मन कमाना।
महा नूर के संग, सनूर हो जाना।

-डॉ सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, ज़िला गुरदासपुर। मो ९४१७१-७५८४६

साका ननकाणा साहिब

*-बीबी अमरजीत कौर**

सिक्ख धर्म की नींव श्री गुरु नानक देव जी ने रखी जिसके सिद्धांत और मर्यादा को गुरु साहिबान और उनके सिक्खों ने अमली जामा पहनाया। श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है:

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

इस फरमान पर पूरे उतरते हुए अनेकों मरजीवडों ने इसे अपने खून से प्रफुल्त किया। गुरु साहिब द्वारा निर्धारत मर्यादा को तोड़ने वालों के विरुद्ध डट कर मुकाबला किया, कुर्बानियां देते हुए हंस-हंस कर शहीदियां पाईं।

सिक्ख धर्म का इतिहास अपने गुरधामों की रक्षा के लिए साकों से भरा पड़ा है। इसमें गुरुद्वारा ननकाणा साहिब का साका सिक्ख इतिहास में अपनी मिसाल आप है।

श्री ननकाणा साहिब वह पविज्ञ स्थान है जहां सिक्ख धर्म के बानी श्री गुरु नानक देव जी का जन्म हुआ। यह स्थान हरेक सिक्ख धर्म को मानने वाले के दिल में बहुत पवित्र स्थान रखता है।

सिक्ख धर्म के विकास में समय-समय स्थापित हुई लहरों में गुरुद्वारा सुधार लहर का अपना योगदान है। २०वीं सदी के दूसरे दशक में पंथक जत्थों ने इस लहर के तहित गुरुद्वारों को आजाद कराने के लिए जत्थे बनाए। इस लहर में गुरुद्वारा ननकाणा साहिब को महंतों से आजाद कराने और उसमें पुन: स्वीकृत रहित मर्यादा स्थापित करने के लिए पंथ एकजुट हुआ।

सिक्खों के जंगों, युद्धों में व्यस्त रहने के कारण गुरधामों की संभाल और सेवा उदासी साधु एवं परंपरागत महंत करते थे। समय के बीतने पर गुरधामों में सिक्ख मर्यादा के उलट पूजा-विधियां और अन्य गुरमति-विरोधी कारवाइयां शुरू हुईं। इन महंतों और डेरेदारों में सब से अधिक और सबसे अयाश ननकाणा साहिब का महंत नरैण दास था। वह और उसके चेले यात्रियों और जिगिआसुओं की बेपती करने में भी संकोच नहीं करते थे।

उसने गुरुद्वारे के वातावरण को अपनी अशलील और आचरणहीन कारवाइयां करके अपवित्र कर रखा था। गुरुद्वारा साहिब के दर्शनों को आने वाली स्त्रियों की इज्जत महफूज नहीं थी। सिक्ख पंथ और खासकर ननकाणा साहिब के आस-पास रहते सिक्खों के मन में महंत नरैण दास के प्रति बहुत रोस था। उन दिनों भाई लक्षमण सिंघ धारोवाली ने समागम कर लोगों को महंत की हरकतों के प्रति जागरूक किया और उससे गुरधाम आजाद कराने के लिए लोगों को तैयार किया। उधर बाद में कायम हुई शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने भी मार्च १९२१ में ननकाणा साहिब में समागम करने का फैसला किया।

महंत नरैण दास को इन सब की जानकारी

*प्रिंसीपल, न्यू अमृतसर माडल स्कूल, भुल्लर रोड, गोबिंद नगर, बटाला-१४३५०५

मिल चुकी थी और उसने इन सबसे निपटने के लिए अनेक गुंडों और पठानों को अपने पास नौकर रख लिया और बहुत सारे हथियार भी इक्टठे कर लिए।

उन दिनों भाई लछमण सिंघ का संपर्क जत्थेदार करतार सिंघ झब्बर के साथ हुआ। उन दोनों ने सलाह कर २० फरवरी, १९२१ को ननकाणा साहिब पहुंच कर गुरुद्वारे को आजाद कराने का मन बना लिया।

अकाली अगुओं को पता लगने पर उन्होंने भाई दलीप सिंघ को जत्थेदार भाई करतार सिंघ झब्बर की ओर भेजा और कहा कि पार्टी के अनुशासन को काण्म रखते हुए ननकाणा साहिब की ओर न जाया जाए। भाई दलीप सिंघ ने भाई झब्बर को जैसे-तैसे मना लिया और वहां से पांच सिंघों का हुक्मनामा लेकर भाई लछमण सिंघ की ओर रवाना हुआ। बहुत ढूंढने के बाद भी भाई लछमण सिंघ जी के साथ उसका संपर्क न हो पाया तो भाई लछमण सिंघ को सूचित करने के लिए यह जिम्मेदारी भाई वरियाम सिंघ की लगा दी गई और आप गुरधाम से थोड़ी दूर भाई उतम सिंघ के कारखाने में चला गया। भाई वरियाम सिंघ ने २० फरवरी की सुबह भाई लछमण सिंघ कों ढूंढा। वे पहले ही श्री गुरु ग्रंथ साहिब के सम्मुख अपने जत्थे सहित ननकाणा साहिब की पवित्र धरती को महंत नरैण दास जैसे नीचों से आजाद करवाने के लिए निकल चुके थे और ननकाणा साहिब के पास पहुंच चुके थे। उन्होंने अरदासा सोधा जाने के बाद अपना फैसला बदलने से इंकार कर दिया। इस बात की खबर भाई दलीप सिंघ को देने के लिए भाई वरियाम सिंघ उनके पास चले गए।

भाई लछमण सिंघ २० फरवरी, १९२१ ई की सुबह लगभग ६ बजे अपने जत्थे समेत गुरुद्वारे में दाखिल हुए और खुद श्री गुरु ग्रंथ साहिब की ताबे बैठ गये और बाकी सिंघ जिनकी गिनती लगभग १५० के करीब बताई जाती है, दीवान हाल में बैठ गए और शबद गायन करने में मगन हो गए।

एकदम गोलियों की बुछाड़ होनी शुरू हो गई, फिर तलवारों, कुलहाड़ियों, गंडासों के साथ गुंडों ने निहत्थे सिंघों पर हमला कर दिया और सिंघों को शहीद कर दिया। लाशों और जख्मी हालत में पड़े सिंघों को इक्टठा कर उन पर मिट्टी का तेल डाल कर आग लगा दी गई। भाई लछमण सिंघ को भी गोलियां लगीं और जख्मी स्थिति में जिंदा पकड़कर जंड के वृक्ष के साथ उलटा बांध कर आग लगाकर शहीद कर दिया गया। महंत नरैणू यह साका वरताकर भाग निकला। इस तरह भाई लछमण सिंघ ने अपने जत्थे के साथ गुरुद्वारा ननकाणा साहिब को आजाद कराने के लिए की गई अरदास की मर्यादा को कायम रखते हुए अपना आपा न्योछावर कर दिया।

अगले दिन इस घटना की खबर भाई उत्तम सिंघ ने सभी संबंधित अधिकारियों को भेजी और लाहौर और अमृतसर के सिक्ख लीडरों को सूचित किया। सांयकाल तक सभी उच्च अधिकारी पहुंच गए। जब भाई करतार सिंघ झब्बर को पता चला तो वह भी अपने जत्थे सहित वहां पहुंच गए । कमिश्नर किंग ने २१ अक्तूबर को शाम तक गुरुद्वारे की चाबियां देने का फैसला कर लिया और शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के मैंबरों के सहित गुरुद्वारे का कबजा लिया गया। इस तरह गुरुद्वारे को आजाद कराने के लिए सिंघों की शहीदियां गुरु-स्थान पर प्रवान हुईं। महंत नरैण दास को बाद में पकड़कर सज़ा दी गई।

साका जैतो का मोर्चा

*-स. जसपाल सिंघ**

सिक्ख पंथ सदैव ही जोखिम भरी जदोजेहदों में से गुजरता रहा है क्योंकि सिक्ख पंथ की स्थापना ही हक-सच पर पहरा देने के लिए की गई है। यह विशेषत: उल्लेखनीय है कि सिक्ख पंथ ने आरंभ से लेकर अब तक कभी किसी के साथ ज्यादती की पहल नहीं की परंतु अपने पर हुई ज्यादती का मुंहतोड़ जवाब अवश्य दिया है जिसके बारे में हरेक सिक्ख के लिए गुरु साहिब जी का पावन हुक्म है :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
(पन्ना १४२७)

आज जिस साके की मैं बात करने जा रहा हूं उसको सिक्ख इतिहास में 'जैतो का मोर्चा' के नाम से स्मरण किया जाता है। सिक्ख पंथ को पहले लंबा समय मुगलों के साथ संघर्ष करना पड़ा और बाद में अंग्रेजों ने भी कोई कम नहीं गुजारी। सिक्ख अवाम को समाप्त करने के लिए अंग्रेजों ने हरेक यत्न किया। जैतो का मोर्चा भी अंग्रेजों के अत्याचार की इसी कड़ी का एक हिस्सा था।

जैतो नाम का एक ऐतिहासिक उपनगर है जो जिला फरीदकोट में आता है। इस उपनगर में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का गुरुद्वारा है। गुरुद्वारा साहिब के साथ एक सरोवर है जिसको गंगसर कहते हैं।

उस समय अकाली लहर पूरे जोरों पर थी। अपने गुरुधामों की रक्षा हेतु सिक्खों को बेअंत मोर्चे लगाने पड़े। अभी गुरु के बाग का मोर्चा चल रहा था। नाभा के महाराजा स. रिपदुमन सिंघ सिक्खों के साथ सच्चे हृदय से साहनुभूति रखते थे। दूसरी ओर महाराजा पवियाला सिक्खों के विरुद्ध अंग्रेजों की सहायता करता था। इसी लिए अंग्रेज शासक-प्रशासक कोई बहाना बना कर महाराजा नाभा को गद्दी से उतारना चाहते थे। इसका कारण बना महाराजा नाभा और महाराजा पटियाला का परस्पर झगड़ा।

अंग्रेजों ने महाराजा पटियाला की सहायता की और बल-प्रयोग से महाराजा नाभा को गद्दी से उतार कर नाभा छोड़ जाने का हुक्म दिया और ९ जुलाई, १९२३ को पेंशन नियत करके उनको देहरादून में भेज दिया। सिक्खों ने नाभा-पति के साथ हुए इस अन्याय का रोष प्रगट किया। ५ अगस्त, १९२३ को शिरोमणि कमेटी ने सहानुभूति का प्रस्ताव पारित कर दिया और ९ सितंबर, १९२३ को नाभा दिवस मनाने का ऐलान किया। नाभा के लोगों ने भी नाभा-पति के पक्ष में जोरदार समर्थन दिया। उन्होंने २५, २६, २७ अगस्त, १९२३ को गुरुद्वारा गंगसर (जैतो) में अखंड पाठ साहिब आरंभ कर दिया। पुलिस ने २८ अगस्त को अखंड पाठ साहिब खंडित करके मुखी सिंघों को श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की पावन उपस्थिति में गिरफतार कर लिया जिससे मोर्चा बहुत जोश भरे हालात में पहुंच गया। १ सितंबर, १९२३

**गांव व डाक ढड्ढे, जिला अमृतसर। मो: ९८५५५-२२५२६*

में निकाले गए जलूस में शामिल २५ व्यक्तियों को गिरफतार कर लिया गया। १४ सितंबर को जैतो में गुरुद्वारा गंगसर में एक अखंड पाठ साहिब आरंभ किया गया। इसको शस्त्रबद्ध सिपाहियों ने रोक दिया और ग्रंथी सिंघ को महाराज की हजूरी में से खींच कर ले गए और २५ अकाली सिंघों को गिरफतार कर लिया गया।

१ सितंबर, १९२३ ई को शिरोमणि कमेटी ने गंगसर में २५ सिंघों का एक जत्था पाठ करने के लिए भेजा। १४ सितंबर, १९२३ ई को पुलिस ने अखंड पाठ कर रहे ग्रंथी सिंघ को तथा अन्य सिंघों को गिरफतार कर लिया। इसलिए शिरोमणि कमेटी ने १४ सितंबर, १९२३ को जैतो का मोर्चा शुरू कर दिया।

१५ सितंबर को श्री अकाल तख्त साहिब पर अरदास करके २५ सिंघों का एक जत्था प्रतिदिन जाना आरंभ हो गया। हरेक जत्था पूर्णत: शांतमयी रह कर अपनी मंजिल की तरफ बढ़ता था जिसको जैतो पहुंचने से पूर्व गिरफतार कर लिया जाता और फिर गिरफतार करने वाले उसको दूर ले जाकर छोड़ देते। यह क्रम लगभग सात महीने चलता रहा।

सरकार ने शिरोमणि अकाली दल और शिरोमणि कमेटी को अवैध करार देकर बहुत संख्या में नेताओं को गिरफतार कर लिया। जब इतने चिरकाल तक जत्थे भेजने के बावजूद भी सरकार के कान पर जूं न सरकी भाव तनिक-सा प्रभाव भी न पड़ा तो ९ फरवरी, १९२४ को जत्थे के सिंघों की संख्या बढाकर ५०० करके शहीदी जत्था भेजना आरंभ किया। प्रथम जत्थे के जैतो की तरफ गतिमान होने से पूर्व जत्थे की ओर से जो संदेश पढा गया उसको किसी कवि ने अपनी कविता में यूं वर्णन किया है:

सुणो खालसा जी साडे कूच डेरे,
असीं आखरी फतहि बुला चल्ले।
पाउ बीज ते सांभ के फसल वड्ढो,
असीं डोहल के रत्त पिआ चल्ले।
चोबदार दे वांग अवाज दे के,
धौंसे कूच दे असीं वजा चल्ले।
तुसीं आपणी अकल दा कम्म करना,
असीं आपणी तोड़ निभा चल्ले।
बेड़ा जुल्त्म दा अंत नूं गरक होसी,
हंझू खून दे असीं वहा चल्ले।
पंथ-गुरु दा आप दशमेश राखा,
कंडे हूंझ के कर सफा चल्ले।
अंग साक कबीलड़ा बाल बच्चा,
बांह तुसां दे हत्थ फड़ा चल्ले।
नदी नाम संजोग दे होण मेले,
सति स्री अकाल बुला चल्ले।

यह जत्था पैदल चलता हुआ अंत को २१ फरवरी को जैतो पहुंच गया। इस जत्थे की कमान जत्थेदार ऊधम सिंघ वरपाल कर रहे थे। यह जत्था बरगाड़ी गांव से होता हुआ शबद पढ़ता हुआ गुरुद्वारा टिब्बी साहिब की ओर जा रहा था। आगे अंग्रेज अफसर मिस्टर विलसन जानसटाक की कमान तले पुलिस, सेना मशीन गन्नें बीड़ कर बैठी थी जिसने बड़ी निदर्यता के साथ निहत्थे सिंघों पर गोलियों की वर्षा कर दी जिसका कवीशर स. गुरबख्श सिंघ ने यूं नकशा खींचा है :

हाइ जालमां हुण तां हद्द कीती,
फाइर गोलीआं दे करवा दित्ते।
करन आए सन यातरा गंगसर दी,
कई भैणां दे वीर मरवा दित्ते।
धरती खून नाल लालो लाल हो गई,
तूंबे वांग सरीर उडवा दित्ते।
जिहड़े बचे सी गोलीआं तों सोहणे,

उन्हां हत्थी जंजीर मरवा दित्ते।

इस प्रकार लगभग एक घंटा सिंघों पर गोलियों की वर्षा होती रही। इस जत्थे में लगभग ४० सिंघ शहीद हुए तथा अन्य बहुत से घायल हो गए। यह भी ज्ञात हो कि इस जत्थे में शामिल एक महिला का एक शीरखोर बच्चा भी गोली से शहीद हुआ। परंतु उस महिला ने फिर भी साहस नहीं छोड़ा, विलाप नहीं किया बल्कि कलगीधर की सच्ची सपुत्री बन, बच्चे को रेता पर रख कर स्वयं जत्थे के साथ चल पड़ी। गोली चलती गई, सिंघ आगे बढ़ते गए। अंत में जत्थे के बचे सदस्यों को गिरफतार किया। जत्थेदार और एक अन्य सिंघ को सात-सात वर्ष कैद हुई।

इस जत्थे के बाद १६ अन्य शहीदी जत्थे श्री अकाल तख्त साहिब से भेजे गए। अंतिम जत्थे को छोड़कर शेष सभी जत्थे गिरफतार किये गए, कई-कई वर्ष की कैद हुई, सिंघों को बहुत मारा-पीटा गया, हाथ-पांव तोड़ दिये गए। कई सिंघों के शरीर नकारा हो गए। २०० के लगभग सिंघ नाभा जेल में शहीद हो गए परंतु किसी गुरु के लाल ने मुआमी न मांगी, पराजय न स्वीकार की, सभी कष्टों को खिले माथे सहन् किया।

अंत में जब अंतों की कठोरता करके भी सरकार की कोई पेश न गई तब कहीं जाकर २७ जुलाई, १९२५ को इस मोर्चे के दौरान गिरफतार किये गए सभी कैदी बिना शर्त रिहा किये। सभी जत्थे जैतो में एकत्र हुए तथा अंत में ७ अगस्त, १९२५ को १०१ अखंड पाठों का भोग डाला गया। उसके पश्चात सभी जत्थे श्री अमृतसर आ गए जहां उनका बहुत ही शानदार स्वागत किया गया और श्री अकाल तख्त साहिब से उनको सिरोपाओ बख्शिश किये गए।

कविता

नकली संत

संत, महात्मा जैसे ऊंचे निर्मल शब्दों को,
'निचले', अपने किरदार से नीचे बहुत गिराते।
ठग धूर्त, भोली जनता को वरगलाते,।
ठग रहे भोली-भाली शक्लों में,
साफ-स्वच्छ कपड़ों में आकर भ्रमाते।
अपने स्वार्थ से प्रेरित होकर
लोगों को हैं खूब लड़ाते।
और अपना अहंकार के लिये,
बेगुनाहों का खून बहाते।
पर जल्लादों जैसे काम,
जनता की कमाई मुफ्त उड़ाते।
लोक-परलोक का भय बताते,
और खुद हलवा-पूड़ी खाते।
मन के काले कलूटे हैं ये,
जाल अपना बहुत फैलाते।
दूसरों को आगे बढ़ते देख न पाते,
अहं में डूबे हिंसा करवाते।
तोड़ लो इनसे सारे नाते,
खुशनसीब वही जो इनसे बच जाते।

-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, अग्रवाल न्यूज ऐजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)-४७०७७५

गुरबाणी राग परिचय-२६

आतस दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ : राग मलार

*-स. कुलदीप सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राग मलार में बाणी क्रमांक २७ पर ४० पन्नों में (१२५४-१२९३) अंकित है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु नानक साहिब की बाणी १९ रागों में है जिन में राग माझ और राग तुखारी को छोड़ कर १७ रागों की बाणी का आरंभ गुरु नानक साहिब के शबदों से होता है। गुरु नानक साहिब द्वारा तीन वारों की रचना की गई है जो राग माझ, राग आसा और राग मलार में हैं। इस प्रकार राग आसा और राग मलार दो ऐसे राग हैं जिनके आरंभ में गुरु नानक साहिब के शबद और अंत में (भक्त बाणी से पूर्व) गुरु नानक साहिब की वार संकलित हैं। राग मलार का विस्तार अधिक न होने वर्णन विषय में विशेष पारदर्शिता है।

गुरमति संगीत में राग मलार मेघ राग की रागिनी है। राग मलार के साथ राग आसा भी मेघ राग की रागिनी है :

सोरठि गोंड, मलारी धुनी ॥
पुनि गावहि आसा गुन गुनी ॥ (पन्ना १४३०)

राग मलार- राग सोरठ, मध माधवी तथा कानड़ा तीन रागों के मेल से बनता है। मेघ मलार काफी ठाठ का औडव राग है, इसमें गंधार और धैवत स्वर वर्जित हैं। यह राग की प्रकृति के बारे में वार मलार के दो श्लोकों में श्री गुरु अमरदास जी ने उल्लेख किया है :

मलारु सीतल रागु है हरि धिआइऐ सांति होइ ॥
(पउड़ी ११ के साथ संलग्न) (पन्ना १२८३)
गुरमुखि मलार रागु जो करहि तिन मनु तनु सीतलु होइ ॥ (पउड़ी १८ के साथ) (पन्ना १२८५)

जो गुरु के मतानुसार मलार अलापता है उसका तन-मन शीतल होता है। राग मलार के पूर्वार्द्ध में शबद हैं और उत्तरार्द्ध में अष्टपदी छंद, वार तथा भक्त-बाणी है। आरंभ में गुरु नानक साहिब के ९ शबद हैं तथा उत्तरार्द्ध में गुरु नानक साहिब द्वारा रचित वार है। वार में गुरु नानक साहिब के २५ तथा श्री गुरु अमरदास जी के २७ श्लोक संलग्न हैं। उक्त शबदों और श्लोकों के आधार पर राग मलार के केन्द्रीय भाव की व्याख्या की जा सकती है।

केन्द्रीय भाव का एक पक्ष है माया का लगाव और दूसरा पक्ष है हरि-नाम स्मरण। राग मलार का प्रथम शबद का उद्घोष जीवन को सार्थक करने के विषय में है :

प्राणी एको नामु धिआवहु ॥
अपनी पति सेती घरि जावहु ॥१॥रहाउ॥
(शबद १, पन्ना १२५४)

इस शबद के प्रथम पद में माया के लगाव और जीव द्वारा प्रभु के विस्मरण का वर्णन है:

खाणा पीणा हसणा सउणा विसरि गइआ है मरणा ॥
खसमु विसारि खुआरी कीनी ध्रिगु जीवणु नही रहणा ॥ (शबद १, पन्ना १२५४)

संसार से लगाव विष है और गुरु के उपदेश के अनुसार प्रभु का ध्यान अमृत है :

गुरमुखि धिआवहि सि अंम्रितु पावहि सेई सूचे होही ॥
अहिनिसि नामु जपहु रे प्राणी मैले हछे होही ॥३॥
(शबद १, पन्ना १२५४)

**सी-१२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद-२११०१६ (यू पी)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पूर्वार्द्ध में महत्त्वपूर्ण राग सोरठ के आरंभ में भी प्रभु के बिछुड़े जीवों के मरण का वर्णन है :

सभना मरणा आइआ वेछोड़ा सभनाह ॥ . . .
जिन मेरा साहिबु वीसरै वडड़ी वेदन तिनाह ॥
(पन्ना ५९५)

जितना माया से लगाव होगा उतना ही बंधन होगा। जिन में हरि-स्मरण का गुण होगा वे उस जंजीर को काट देंगे :

नानक अउगुण जेतड़े तेते गली जंजीर ॥
जे गुण होनि त कटीअनि से भाई से वीर ॥
(पन्ना ५९५)

सांसारिक आसक्ति और हरि-स्मरण के छंद को वार मलार की अंतिम तीन पउड़ी के श्लोकों में स्पष्ट किया गया है।

माया से प्रेरित कर्मों के वृक्ष में दो फल लगते हैं। एक फल अमृत है, दूसरा फल विष है। प्रभु सभी कर्मों का प्रेरक है। वह इस प्रकार का विधान करता है कि किसी को हरि-नाम फल मिलता है और दूसरे को विष फल। दुनिया की बड़ाई आकर्षक हैं, उन्हें तिरस्कृत करो (जला दो)। इन्हीं बड़ाईयों के छलावे ने नाम विस्मृत करा दिया है किन्तु यह अंत में साथ नहीं देतीं।

रह-रह कर चमकने वाले बिजली के लिशकारे (प्रकाश) के समान संसार अतिशीघ्र नाश होने वाला है। चंचल बुद्धि वाला मन संकलप विकल्प के अधीन होकर मृत्यु (कबर) से लापरवाह है। मन क्षुद्र बुद्धि वाला है। हे प्रभु! तू उदार है, मुझे नाम-अमृत दे। अन्य विकारों से दूर रख। हे प्रभु! यह कच्ची मिट्टी से बना शरीर पानी से भरा है। इसका निर्माण तेरी कारीगरी है। तेरी ही शक्ति से मैं सामर्थ्यवान हूं। मैं तेरे दर का कूकर हूं, तेरे सतसंग से मस्त हूं। मेरी मस्ती प्रतिदिन बढ़ रही है। यह दुनिया आग के समान है और तुम्हारा नाम शीतल है :

चिलिमिलि बिसीआर दुनीआ फानी ॥
कालूबि अकल मन गोर न मानी ॥
मन कमीन कमतरीन तू दरीयाउ खुदाइआ ॥
एकु चीजु मुझै देहि अवर जहर चीज न भाइआ ॥
पुराब खाम कूजै हिकमति खुदाइआ ॥
मन तुआना तू कुदरती आइआ ॥
सग नानक दीबान मसताना नित चड़ै सवाइआ ॥
आतस दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ ॥२॥
(पन्ना १२९१)

राग मलार में मानव-जीवन के यथार्थ की पृष्ठभूमि में प्रकृति के विविध प्रतीकों के माध्यम से नाम-सिमरन के चित्रों को प्रस्तुत किया गया है। श्री गुरु नानक देव जी ने योगी के रूप में सारस को सम्बोधित किया है : "हे बहन! तेरे वस्त्र श्वेत हैं, मीठे वचन है, तेरी नाक लम्बी है और नेत्र काले हैं। क्या तूने इस शरीर में कभी परमेश्वर को देखा है?"

हे भाई! जिस प्रकार सतिगुरु दिखाए उसी तरह देखूं। मुझे प्रभु से यह सामर्थ्य मिली है कि आकाश में उड़कर जहां भी देखती हूं परमेश्वर दिखाई देता है। जिस प्रभु ने शरीर बनाया है उसी प्रभु ने पंख लगाए हैं, जिन से उड़ने की ललक बनी रहती है। परलोक में न यह शरीर जावेगा न श्वास रूपी पंख। यदि कर्म श्रेष्ठ हो तो यह जीव शरीर के होते हुए भी सत्य स्वरूप में समा जाता है :

नानक करमु होवै जपीऐ करि गुरु पीरु ॥
सचि समावै एहु सरीरु ॥ (शबद ९, पन्ना १२५७)

राग मलार की अंतिम अष्टपदी में भी गुरु नानक साहिब एक आड़ि पक्षी (Turdus gingianus) को जीभ के स्वाद के कारण लालच में देखकर जीव के प्रति उपदेश करते हैं : हे पक्षी! तू जाल में क्यों फंसी है, तू हृदय में

स्मरण करके अदृश्य प्रभु को नहीं देख पाती। भोग में मुक्ति नहीं है। जो विलास में पड़ा रहता है उसे दुख मिलता है। सच्चे हरि नाम के बिना किसी को मुक्ति नहीं मिलती :

से दुख आगै जि भोग बिलासे ॥
नानक मुकति नही बिनु नावै साचे ॥
(पन्ना १२७५)

पक्षियों के एकाकी सन्दर्भ के बाद काव्य के विविध उपमानों के द्वारा प्रभु के प्रति प्रेम का वर्णन किया गया है। गुरु नानक साहिब की प्रथम अष्टपदी में प्रथम चार चरणों में चकवी का 'पिर बिनु नींद न पाई', 'कमल का सूरज किरण से सहज विकास', चातक की स्वाति नक्षत्र की बूंद के लिए पुकार तथा मीन का जल के बिना मरण का उल्लेख है। वियोगिनी जीवात्मा गुरु के माध्यम से प्रियतम को संदेश भेजती है। अंत में गुरु-कृपा से उसे हृदय में ही प्रभु के दर्शन हो जाते हैं और तृषणा, संताप मिट जाता है :

अपना काजु सवारहु आपे सुखदाते गोसांईं ॥
गुर परसादि घर ही पिरु पाइआ तउ नानक तपति बुझाई ॥ (असटपदी १, पन्ना १२७३)

राग मलार का मुख्य विषय *"खुनक नाम खुदाइआ"* प्रभु का शीतल नाम है। गुरु मेघ का प्रतीक है और उस का उपदेश शबद-अमृत की वर्षा है। *"प्राणी एको नामु धिआवहु"* के बाद दूसरे शबद में गुर-वचन को मन में धारण करने वाली सहज सुखी कामिनी का वर्णन है जिस का हृदय अमृत-बूंदों से भीग गया है और मन हरि-रस में लीन है :

बरसु घना मेरा मनु भीना ॥
अंम्रित बूंद सुहानी हीअरै गुरि मोही मनु हरि रसि लीना ॥१॥रहाउ॥
सहजि सुखी वर कामणि पिआरी जिसु गुर बचनी मनु मानिआ ॥
हरि वरि नारि भई सोहागणि मनि तनि प्रेमु सुखानिआ ॥२॥ (शबद २, पन्ना १२५४)

हरि-वर को पाकर जीवात्मा का शृंगार सच्चा हो गया है। उसने गुरु के उपदेश से प्रभु नाम का आधार स्वीकार किया है :

अपुने पिर हरि देखि विगासी तउ धन साचु सीगारो ॥
अकुल निरंजन सिउ सचि साची गुरमति नामु अधारो ॥४॥ (शबद ४, पन्ना १२५५)

गुरु के द्वारा मेघ के समान नाम-अमृ-वर्षा का वर्णन राग मलार की वार में पउड़ी ४ से पउड़ी १६ तक मिलता है। पउड़ी ४ में श्री गुरु अंगद देव जी के दो श्लोकों में सावन के महीने में मेघ-वर्षा के द्वारा प्रेम से अनुरक्त होकर सुहागिन बनने का संदेश है। अन्य से स्नेह होने पर दुर्भाग्य वाली जीवात्मा पछतावे से मरेगी :

सावणु आइआ हे सखी कंतै चिति करेहु ॥
नानक झूरि मरहि दोहागणी जिन्ह अवरी लागा नेहु ॥१॥
सावणु आइआ हे सखी जलहरु बरसनहारु ॥
नानक सुखि सवनु सोहागणी जिन्ह सह नालि पिआरु ॥२॥ (पन्ना १२८०)

पउड़ी ५ और ६ से श्री गुरु अमरदास जी बरसने से पूर्व बादलों के रंग का चित्रण करते हैं। प्रभु स्वयं निर्मल जल के रूप में बरसता है। जिन के मन में भय-भावना है वे बाहरी रूप के भुलावे में प्रभु-प्रीति नहीं पहचान सकतीं। बादल प्रकृति के रूप में स्थूल रूप है। जल की वर्षा उपदेश माध्यम है किन्तु जल की नाम रूप में धारणा चिंतन या कारण रूप है:

किआ उठि उठि देखहु वपड़े इसु मेघै हथि कछु नाहि ॥
जिनि एहु मेघु पठाइआ तिसु राखहु मन मांहि ॥
(पन्ना १२८०)

प्रभु की अन्य वस्तुयों की देन सुखदायक है किन्तु नाम-अमृत की देन सब से उत्तम है। इस प्रकार मेघ के जल की वर्षा एक प्रतीक के रूप में है। पउड़ी आठ के द्वितीय श्लोक में इसे स्पष्ट किया गया है। जानने वाले जानते हैं कि प्रभु का नाम-अमृत सदा बरसता है। गुरु के द्वारा जिस ने यह रहस्य जाना है, वह उस हरि अमृत को हृदय में धारण किये रखते हैं। हे हरि! ऐसे जीव अहम और तृष्णा को मार कर तुम्हारे प्यार में उस अमृत का पान करते हैं। वह अमृत हरि का नाम ही है जो प्रभु की कृपा से ही बरसता है। गुरु के द्वारा ही हरि-प्रभु की कृपा से इस की प्राप्ति होती है:

अंम्रितु सदा वरसदा बूझनि बूझणहार ॥
गुरमुखि जिन्ही बुझिआ हरि अंम्रितु रखिआ उरि धारि ॥
हरि अंम्रितु पीवहि सदा रंगि राते हउमै त्रिसना मारि ॥
अंम्रितु हरि का नामु है वरसै किरपा धारि ॥
नानक गुरमुखि नदरी आइआ हरि आतम रामु मुरारि ॥ *(पन्ना १२८१-८२)*

नाम-अमृत की स्पष्ट व्याख्या के बाद श्री गुरु अमरदास जी ने नाम-अमृत को जल-धारा के प्रतीक का रूप दिया है और पउड़ी ९ से १३ तक श्लोकों में पपीहे की व्याकुलता दर्शाई है।

आध्यात्मिक रस से सराबोर होकर सहज सच्चे भाव से जीव (बाबीहा) की पुकार है। हरि-नाम ही मेरा जीवन है। मैं इसके बिना नहीं रह सकता। गुरु के वचनों से यह प्राप्त होता है मैं जिसके बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। उससे गुरु ने मिला दिया है:

बाबीहा भिंनी रैणि बोलिआ सहजे सचि सुभाइ ॥
इहु जलु मेरा जीउ है जल बिनु रहणु न जाइ ॥
गुर सबदी जलु पाईऐ विचहु आपु गवाइ ॥
नानक जिसु बिनु चसा न जीवदी सो सतिगुरि दीआ मिलाइ ॥ *(पन्ना १२८३)*

पपीहे की इस पुकार के क्रम में श्री गुरु अरजन देव जी मार्ग दर्शन करते हैं। मायाधारी जीवों की अज्ञान की रात्रि समाप्त नहीं होती, उन्हें हरि-नाम विस्मृत होता है। हरि-गुण-गान से रात-दिन सुखी होते हैं। रतन, जवाहर या माणिक्य मस्तक पर पहने हों, जो प्रभु को प्रिय हो वही प्रभु के द्वार पर सुशोभित होते हैं :

राति न विहावी साकतां जिन्हा विसरै नाउ ॥
राती दिनसु सुहेलीआ नानक हरि गुण गांउ ॥१॥
मः ५ ॥
रतन जवेहर माणका हभे मणी मथंनि ॥
नानक जो प्रभि भाणिआ सचै दरि सोहंनि ॥
(पउड़ी १४, पन्ना १२८४)

व्याकुलता एवं मार्ग-निर्देशक के बाद जीव (बाबीहा) जब गुरु के सहज शबद के माध्यम से प्रभु का हुकम पहचान लेता है तब प्रभु-कृपा से मूसलाधार वर्षा (गुरु-शबद की) होती है।

उषा काल में जब पपीहा पुकारा तो उस की पुकार सुनी गई प्रभु के दरबार से मेघ को हुकम हुआ कि वह कृपापूर्वक वर्षा करे। मैं उन पर बलिहार हूं जिन्होंने प्रभु को हृदय में धारण किया है। गुरु के शबद के विचार से उन्हें एक जगह हरियाली मिलती है :

बाबीहा अंम्रित वेलै बोलिआ तां दरि सुणी पुकार ॥
मेघै नो फुरमानु होआ वरसहु किरपा धारि ॥
हउ तिन कै बलिहारणै मै जिनी सचु रखिआ उरि धारि ॥
नानक नामे सभ हरीआवली गुर कै सबदि वीचारि ॥ *(पन्ना १२८५)*

जीवात्मा के इस बाबीहा प्रसंग के मेघ और सावण मास के लोक-काव्य के मनोरम प्रतीक का उपसंहार श्री गुरु अमरदास जी के पउड़ी १८ में सलंग्न श्लोकों से होता है जो इस प्रसंग में पउड़ी ४ में दिये गये श्री गुरु अंगद

देव जी के दिये श्लोकों के भाव और शैली का अनुसरण करते हैं। सौभाग्यवती (सुहागिन) का अपार गुरु (प्रभु) से प्रेम है। गुरु के उपदेशों पर विचार से उस का जीवन सार्थक है। द्वैत भाव के कारण गुण रहित जीवात्मा प्रभु पति के अमृतमय शीतल नाम के तत्व को नहीं जानती वह प्रभु-मिलन वेला के सावण मास की अवधि में जलती रहती है। उस का शृंगार भी भटकने का कारण होता है :

सावणि सरसी कामणी गुर सबदी वीचारि ॥
नानक सदा सुहागणी गुर कै होति अपारि ॥१॥
म : ३ ॥
सावणि दझै गुण बाहरी जिसु दूजै भाइ पिआरु ॥
नानक पिर की सार न जाणई सभु सीगारु खुआरु ॥२॥ . . . १७॥ (पन्ना १२८५)

राग मलार में संकलित बाणी को गुरु नानक साहिब के द्वारा रचित श्लोक की एक पंक्ति के आधार पर विहंगय दृष्टि से इस आलेख में विचार किया गया है। राग में बाणी के क्रमांनुसार कुछ सन्दर्भ उल्लेखनीय हैं। गुरु नानक साहिब द्वारा दो शबदों में संसार में दुख की व्यापकता पर विचार किया गया है। प्रथम शबद में चार दुखों का उल्लेख है। दो दुख शारीरिक है--रोग और भूख, एक दुख शरीर की अनित्यता (मृत्यु) का है। सब से बड़ा दुख प्रभु का विस्मरण या विछोड़ा है। यदि प्रभु के विस्मरण के दुख से निवृन्त हो जावे तो सभी दुख छूट जावेंगे। हमारी काया में प्रभु का अंश भी है। उस अंश से शरीर कंचन के समान हो जाता है। सत्य प्रभु का अंश मल रहित है:

कंचन काइआ निरमल हंसु ॥
जिसु महि नामु निरंजन अंसु ॥
दूख रोग सभि गइआ गवाइ ॥
नानक छूटसि साचै नाइ ॥४॥२॥७॥ (पन्ना १२५६)

हरि-नाम स्मरण दुख रूपी विष को नष्ट करने की औषधि है। इस के खाने से विकार नष्ट हो जाते हैं।

श्री गुरु अमरदास जी ने अहंकार को विष के रूप में सब से बड़ा विकार बताया है जिसके भारी वजन को हम उठाये हुए है। हउमै के विष को दूर करने के लिए गुरु का शबद गरुड़ के समान है जिसे अपनाने पर दुख दूर होता है। सामान्य जीवन व्यतीत करते हुए यदि हम गुरमति के अनुसार आचरण करते हैं तो इसी जीवन में सहज अवस्था में मोह-बंधन से मुक्त होकर 'जीवन मुक्त' का आनंद ले सकते हैं :

जीवन मुकत गुरमती लागे ॥
हरि की भगति अनदिनु सद जागे ॥ . . .
जो किछु होवै सहजि सुभाइ ॥
हरि रसु पीवै रसन रसाइ ॥३॥ (पन्ना १२६२)

श्री गुरु रामदास जी ने अहंकार को एक दीवार का रूप दिया है जो जीवात्मा को परमात्मा से अलग करती है। गुरु के द्वारा अहंकार तोड़े जाने पर जीवात्मा का प्रभु से मिलन होता है:

धन पिर का इक ही संगि वासा विचि हउमै भीति करारी ॥
गुरि पूरै हउमै भीति तोरी जन नानक मिले बनवारी ॥४॥१॥ (पन्ना १२६३)

राग मलार में श्री गुरु अरजन देव जी के ३० शबद हैं। इनमें से दो शबदों में गुरु के मेघ के रूप में वर्णन है :

बरसु मेघ जी तिलु विलमु न लाउ ॥
(शबद ७, पन्ना १२६७)

हे परमेश्वर! उपदेश की वर्षा करो। तिल मात्र विलंब न लगाओ "घनिहर बरसि सगल जगु छाइआ" (गुरु रूपी मेघ ने जल बरसा कर छाया से आच्छादित कर दिया है।)

श्री गुरु अरजन देव जी के एक सरस शबद में प्रभु के मातृ वत्सल रूप का चित्रण

किया गया है। हम प्रभु के बालक हैं। जिसका पिता मेरा स्वामी है उस बालक को भूख कैसी? जब बालक दूध के सहारे होता है तब बिना दूध के उस से रहा नहीं जाता। माता उस की स्थिति जान कर दूध पिलाती है तब वह दूध पीकर अत्यंत-तृप्त होता है। प्रभु के दर्शन की चाहत है। हे प्रभु! तुम्हारे चरण मेरे हृदय में नित्य निवास करें :

पिता क्रिपालि आगिआ इह दीनी बारिकु मुखि मांगै सो देना ॥
नानक बारिकु दरसु प्रभ चाहै मोहि ह्रिदै बसहि नित चरना ॥४॥२॥ (पन्ना १२६६)

राग मलार में भक्त-बाणी के अन्तर्गत भक्त नामदेव जी के दो तथा भक्त रविदास जी के तीन शबद हैं। राग आसा में गुरु नानक साहिब की निरंकार प्रभु के दर पर स्तुति की विशेष बाणी 'सो दरु' है। भक्त नामदेव ने अकुल निरंजन गोपाल राय की स्तुति की है। जिसके घर चित्रगुप्त, धर्मराज आदि उपस्थित हैं वह राजा तीनों भवनों का स्वामी है। नामदेव उसी की शरण में है जिसके घर में इतने जीव हैं तथा जो सब में व्यापक हैं। भगवान की महानता बताने के लिए भक्त-जन दिव्य ज्योति हैं:

एते जीअ जां चै हहि घरी ॥
सरब बिआपिक अंतर हरी ॥
प्रणवै नामदेउ तां ची आणि ॥
सगल भगत जा चै नीसाणि ॥ (पन्ना १२९२)

भक्त नामदेव जी का दूसरा शबद उनके जीवन में घटित घटना पर आधारित है। पुजारी लोगों का यह विश्वास था कि मंदिर (आलय) पर उनका एकाधिकार है उन्होंने शूद्र-शूद्र कहकर नामदेव को मार भगाया। दयालु विट्ठल ने मंदिर के मुख प्रवेश द्वार को नामदेव की ओर कर दिया। पूरा मंदिर घूमने से मंदिर की पीठ पंडितों की ओर हो गई।

भक्त रविदास के प्रथम दो शबदों में अपनी जाति का बिना संकोच उल्लेख है। प्रभु के गुणों के हृदय में होने से रविदास पवित्र है। गंगा में मिलकर अपवित्र शराब भी पवित्र हो जाती है। ताड़ी के भोज पत्र पर भक्ति ज्ञान की बातें लिख दी जावें तो वह पवित्र हो जाता है। वैसे ही चमार जानवरों को ढोने का काम करते हैं किन्तु प्रभु के नाम की शरण से ब्रह्मण भी भक्त रविदास को प्रणाम करते हैं। भक्त रविदास जी, भक्त नामदेव जी और भक्त कबीर जी के सम्मानित होने का वर्णन दूसरे शबद में करते हैं।

राग मलार का समापन भक्त रविदास जी के शबद से किया गया है। झूठे व्यापार को बंद कर के प्रिय स्वामी की भक्ति करनी होगी। भक्ति के लिए सतसंगति आवश्यक है, अज्ञान की नींद से जागना होगा, परनिंदा करना छोड़ना होगा पर-निन्दा दूसरों के मैले कपड़े धोने के समान है। पाप-कर्मों का बहीखाता फाड़ना पड़ेगा। जब कर्मों का लेखा होगा तो कृत कर्म सामने आवेंगे। सतसंगति में नाम-भक्ति से परम गति (शीतलता) प्राप्त होगी, कर्मों की तपन से मुक्ति होगी।

मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते ॥
साधसंगति पाई परम गते ॥रहाउ॥
मैले कपरे कहा लउ धोवउ ॥
आवैगी नीद कहा लगु सोवउ ॥१॥
जोई जोई जोरिओ सोई सोई फाटिओ ॥
झूठै बनजि उठि ही गई हाटिओ ॥२॥
कहु रविदास भइओ जब लेखो ॥
जोई जोई कीनो सोई सोई देखिओ ॥३॥१॥३॥
(पन्ना १२९३)

गुरबाणी चिंतनधारा-४०

रहरासि साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

जेते बदन स्रिसटि सभ धारै ॥
आपु आपनी बूझ उचारै ॥
तुम सभही ते रहत निरालम ॥
जानत बेद भेद अर आलम ॥१४॥

गुरु पातशाह का पावन फरमान है कि वह कुदरत जितने भी शरीरों की रचना करती है उसमें से प्रत्येक प्राणी अपनी सूझ-बूझ के अनुसार ही प्रभु की सिफ्त-सलाह करता है, उस परमेश्वर का यश-गान करता है। वह परमेश्वर सब जीवों से निर्लेप रहता है। यह तथ्य धर्म-ग्रंथ जानते हैं। तत्ववेता अथवा ज्ञानी पुरुष इस रहस्य को अच्छी तरह समझते हैं।

वस्तुत: उस सृजनहार ने जितने जीवों की उत्पत्ति की है और उन्हें जितनी उपमा करने की सामर्थ्य बख्शी है उतनी ही स्तुति उस प्रभु की वह प्राणी कर सकता है। उस परमेश्वर के गुणों का अंत नहीं पाया जा सकता।

निरंकार न्रिबिकार निरलंभ ॥
आदि अनील अनादि असंभ ॥
ता का मूढ़ उचारत भेदा ॥
जा को भेव न पावत बेदा ॥१५॥

वाहिगुरु निराकार है। वह स्थूल आकार से रहित है। वह किसी भी विकार से विकृत नहीं हो सकता। वह किसी सहारे का मोहताज नहीं, अत: वह निराश्रित है। वह सारी सृष्टि का मूल अथवा प्रारंभ है। वह रूप-रंग से रहित तथा अजन्मा है अर्थात् जन्म से रहित है। वह स्वयं से प्रकाशमान है। मूढ़ व्यक्ति शेखी मारता है अर्थात् व्यर्थ का ढोंग करता है कि उसने निरंकार का भेद पा लिया है। जिसका भेद धार्मिक ग्रंथ भी न पा सके उसे अल्पज्ञ प्राणी क्या जानेगा?

पंचम पातशाह की पावन बाणी 'सुखमनी साहिब' में भी यह भाव व्यक्त हुआ है, यथा :

रूपु न रेख न रंगु किछु त्रिहु गुण ते प्रभ भिंन ॥
तिसहि बुझाए नानका जिसु होवै सुप्रसंन ॥
(पन्ना २८३)

'जापु साहिब' की पावन बाणी में गुरु कलगीधर पातशाह ने पहले ही छंद में उस अकाल पुरख को रूप, रंग, रेख से रहित, सदा कायम रहने वाला, अनुभव स्वरूप, स्वत: प्रकाशवान, बेअंत तथा अनंत कहा है, यथा :

चक्क चिहन अरु बरन जाति अरु पाति नहिन जिह ॥
रूप रंग अरु रेखे भेख कोऊ कहि न सकत किह ॥
अचल मूरति अनभउ प्रकास अमितोजि कहिज्जै ॥
कोटि इंद्र इंद्राण साहु साहाणि गणिजै ॥
त्रिभवण महीप सुर नर असुर नेत नेत बन त्रिण कहत ॥
तव सरब नाम कथै कवन करम नाम बरनत सुमति ॥१॥ (जापु साहिब)

ता को करि पाहन अनुमानत ॥
महा मूढ़ कछु भेद न जानत ॥
महादेव को कहत सदा सिव ॥
निरंकार का चीनत नहि भिव ॥१६॥

गुरु पातशाह का पावन फरमान है कि मूर्ख लोग पत्थर की मूर्ति बनाकर उसे ही प्रभु-

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर। मो: ०९३१४६-०९२९३*

परमेश्वर समझ लेते हैं। वे देव को सदा स्थिर रहने वाले प्रभु मान लेते हैं, परन्तु सदा कायम रहने वाले प्रभु की हस्ती को नहीं जानते।

जो इंसान पत्थर की मूर्ति स्थापित कर उसे ही भगवान रूप समझ कर उसकी पूजा करते हैं ऐसे महामूर्ख लोग अकाल पुरख के दिव्य स्वरूप का तिल मात्र भी अंदाजा नहीं लगा सकते। वस्तुत: वे निरंकार प्रभु की वास्तविक हस्ती का भेद नहीं जानते हैं।

आपु आपुनी बुधि है जेती ॥
बरनत भिंन भिंन तुहि तेती ॥
तुमरा लखा न जाइ पसारा ॥
किह बिधि सजा प्रथम संसारा ॥१७॥

हे प्रभु! प्रत्येक जीव अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार अर्थात् जिसे आप ने जितनी बुद्धि या कहने की समर्थ्य बख्शी है उसके अनुसार विभिन्न ढंगों से तेरे गुणों का वर्णन करते हैं, लेकिन आपका अद्भुत एवं विलक्षण प्रसार, जो रचना आप ने की है, वह अवर्णनीय है, वह जीव की समझ सीमा से परे है। कोई भी तो नहीं जानता कि किस विधि से सर्वप्रथम इस संसार की सृजना हुई।

उस असीम प्रभु को सीमित बुद्धि द्वारा कैसे जाना जा सकता है? अत: चिंतकों के अनुसार उस बेअंत का अंत पाना किसी जीव का मनोरथ ही नहीं हो सकता। केवल उस अनंत परमेश्वर के गुणगान करते हुए जीव का उसी का रूप हो जाना मनुष्य-जीवन का प्रमुख लक्ष्य है।

एकै रूप अनूप सरूपा ॥
रंक भयो राव कही भूपा ॥
अंडज जेरज सेतज कीनी ॥
उतभुज खानि बहुर रचि दीनी ॥१८॥

अनुपम सौन्दर्य का मालिक, विलक्षण स्वरूप वाला वह प्रभु कहीं गरीब तो कहीं अमीर बना हुआ है अर्थात् कहीं भिखारी है तो कहीं राजा है। कहने का अभिप्राय रंक-राव, कंगाल-धनी सब में वह स्वयं विद्यमान है।

अंडे से पैदा होने वाले जीव, जेर से पैदा होने वाले जीव, पसीने से पैदा होने वाले जीव और धरती में से उगने वाली वनस्पति आदि उत्पत्ति के चार स्रोतों की रचना की है और फिर इन्हीं स्रोतों द्वारा समस्त रचना कर रहा है।

कंहू फूल राजा है बैठा ॥
कंहू सिमटि भियो संकर इकैठा ॥
सगरी स्रिसटि दिखाइ अचंभव ॥
आदि जुगादि सरूप सुयंभव ॥१९॥

वह परमेश्वर कहीं तो फूल कर अर्थात् अपने विस्तारित रूप में राजा बना बैठा है और कहीं संकुचित रूप होकर त्यागी स्वभाव से समस्त वस्तुओं को त्याग सन्यासी बना बैठा है। वह सारी सृष्टि-रचना का आश्चर्यजनक तमाशा दिखा रहा है। वह स्वयं से प्रकाशमान सुंदर स्वरूप वाला प्रभु सृष्टि के आदि में भी प्रकाशस्वरूप था और युगों के आरंभ में भी।

वस्तुत: वह निरंकार कहीं कमल फूल से उत्पन्न होकर सृष्टि-उत्पत्ति का मूल 'ब्रह्मा' बना बैठा है तो कहीं जगत-रचना को समेट कर विनाश करने वाला प्रलयकारी रूप 'शिव' बना बैठा है अर्थात् वास्तविक रचनहार वह परमात्मा स्वयं है। सारी दुनिया को अजब तमाशे दिखाने वाला प्रभु आप ही है। ऐसा वह परमेश्वर युगों के प्रारंभ से भी मौजूद था, वर्तमान में भी है और सृष्टि के खत्म हो जाने पर भी सत्य स्वरूप सदा कायम रहेगा, जैसा कि गुरु नानक पातशाह जी की पावन बाणी है :

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ (पन्ना १)

अब रच्छा मेरी तुम करो ॥
सिक्ख उबारि असिक्ख संघरो ॥
दुशट जिते उठवत उतपाता ॥

सकल मलेछ करो रण घाता ॥२०॥

हे प्रभु जी! अब आप मेरी रक्षा करो, सिक्ख सेवकों का उद्धार करो तथा समस्त दोषियों का समूल नाश करो जी। जितने भी उत्पाती, खोटी बुद्धि वाले, मानवता के दोषी अर्थात् इंसानियत के हत्यारे हैं उनका युद्ध में विनाश करो।

वस्तुतः गुरु पातशाह उन सिक्ख सेवकों के उद्धार के लिए वाहिगुरु के चरणों में बेनती कर रहे हैं जो गुरु-उपदेश अनुसार जीवन में विचरण करते हैं तथा उन गुरु-शिक्षा के विरोधियों, भ्रष्टाचारियों, पापियों का संसार रूपी रणभूमि में समूल नाश करने हेतु प्रार्थना कर रहे हैं।

जे असिधुज तव सरनी परे ॥
तिन के दुशट दुखित ह्वै मरे ॥
पुरख जवन पग परे तिहारे ॥
तिन के तुम संकट सभ टारे ॥२१॥

हे खड़गधारी! (कृपाण धारण कर्त्ता) प्रभु! जो जीव तेरी शरण में आ गये उनके दुश्मन स्वयं दुखी होकर अपनी ही मौत मर गये। जो जीव आपके चरणों का आश्रय लेकर तेरी शरण आ गये, आप जी ने उनके समस्त कष्टों का निवारण कर दिया। वस्तुतः वह प्रभु शरण आने वालों की प्रेम सहित प्रतिपालना करता है। गुरबाणी आशयानुसार :

सारि समालै निति प्रतिपालै प्रेम सहित गलि लावै ॥
कहु नानक प्रभ तुमरे बिसरत जगत जीवनु कैसे पावै ॥ *(पन्ना ६१७)*

जो कलि को इक बार धिऐहै ॥
ता के काल निकटि नहि ऐहै ॥
रच्छा होइ ताहि सभ काला ॥
दुशट अरिसट टरें ततकाला ॥२२॥

जो इंसान एकाग्रचित होकर एक बार भी तेरा ध्यान धरते हैं अर्थात् एकचित्त होकर तेरा सिमरन करते हैं, उनके निकट यमदूत फटक भी नहीं सकता। उनकी हमेशा रक्षा होती है और उनके दुश्मनों का तत्काल विनाश हो जाता है। उस ईश्वर का एकाग्रता से सिमरन करने वालों पर सदैव उसकी कृपा बनी रहती है तथा उसी की रहमत की बदौलत जीव के समस्त दुख, क्लेश, संताप तथा वैरी नाश हो जाते हैं।

इसलिए गुरबाणी हमें ईश्वर के नाम में सुरति जोड़ने एवं प्रीत करने की प्रेरणा देती है, यथा :

रे मन राम सिउ करि प्रीति ॥
स्रवन गोबिंद गुनु सुनउ अरु गाउ रसना गीति ॥ *(पन्ना ६३१)*

प्रभु का नाम ही समस्त दुखों को काटने वाला है। पंचम पातशाह की पावन बाणी में भी यही भाव स्पष्ट होता है :

दुख भंजनु तेरा नामु जी दुख भंजनु तेरा नामु ॥
आठ पहर आराधीऐ पूरन सतिगुर गिआनु ॥ *(पन्ना २१८)*

क्रिपा द्रिसटि तन जाहि निहरिहो ॥
ता के ताप तनक मो हरिहो ॥
रिद्धि सिद्धि घर मो सभ होई ॥
दुशट छाह छ्वै सकै न कोई ॥२३॥

हे वाहिगुरु! जिस किसी भी जीव की ओर आप कृपा-दृष्टि से निहारते हो अर्थात् जिस किसी पर भी आपकी रहमत की निगाह पड़ती है उसके तीनों ताप (आधि, व्याधि, उपाधि) पल भर में दूर हो जाते हैं। प्राकृतिक शक्तियों पक्ष में होने से उनके सभी कार्य स्वतः रास होते जाते हैं तथा कोई दुष्ट उसकी परछाईं तक को भी नहीं छू सकता। गुरबाणी में अन्यत्र भी प्रमाण है, यथा :

ताप संताप सगले गए बिनसे ते रोग ॥
पारब्रहमि तू बखसिआ संतन रस भोग ॥रहाउ॥
सरब सुखा तेरी मंडली तेरा मनु तनु आरोग ॥

गुन गावहु नित राम के इह अवखद जोग ॥
आइ बसहु घर देस महि इह भले संजोग ॥
नानक प्रभ सुप्रसंन भए लहि गए बिओग ॥
(पन्ना ८०७)

अर्थात् जिस पर वाहिगुरु की बख्शिश हो जाती है उसके समस्त रोग, संताप, चिंता, दरिद्र दूर हो जाते हैं।

एक बार जिन तुमै संभारा ॥
काल फास ते ताहि उबारा ॥
जिन नर नाम तिहारो कहा ॥
दारिद दुसट दोख ते रहा ॥२४॥

हे प्रभु जी! जिन जीवों ने एक बार भी आपका एकाग्रता से सिमरन किया आप जी ने उन्हें काल के फंदे से ही मुक्त कर दिया। जिस किसी ने भी हृदय करके आपका सिमरन किया, सिमरन की बरकतों से वे दरिद्रता, कंगाली, दुष्टों तथा दुखों-क्लेशों से मुक्त हो गया।

अत: विकारों रूपी दरिद्रों से बचाव में प्रभु का सिमरन अचूक औषधि है। पंचम पातशाह जी ने 'सुखमनी साहिब' में सिमरन की बरकतों का विस्तार से वर्णन किया है, यथा :

प्रभ कै सिमरनि नाही जम त्रासा ॥
प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा ॥
प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ॥
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ ॥ (पन्ना २६३)

वस्तुत: प्रभु-सिमरन से बड़ी कोई प्राप्ति नहीं। सिमरन की दात प्राप्त कर आनंद विभोर हो बाबा फरीद जी पुकार उठे :

फरीदा सकर खंडु निवात गुड़ु माखिओ मांझा दुधु ॥
सभे वसतू मिठीआं रब न पुजनि तुधु ॥
(पन्ना १३७९)

अर्थात् बाबा फरीद जी का पावन अनुभव है कि शकर, खांड, मिशरी, गुड़, शहद, दूध ये समस्त वस्तुएं मीठी हैं पर इनकी मिठास नाम-रस का मुकाबला नहीं कर सकती अर्थात् प्रभु के नाम में सर्वोच्च मिठास है अथवा विलक्षण आनंद है।

खड़ग केत मैं सरणि तिहारी ॥
आप हाथ दै लेहु उबारी ॥
सरब ठौर मो होहु सहाई ॥
दुसट दोख ते लेहु बचाई ॥२५॥

हे शक्ति चिन्ह के धारक स्वामी! मैं आपकी शरण में आ गया हूं, मुझे अपना हाथ देकर बचा लो अर्थात् हर प्रकार से रक्षा करो। गुरु कलगीधर पातशाह उस परवरदिगार के चरणों में अरदास बेनती करते हैं कि हे वाहिगुरु जी! प्रत्येक स्थान पर मेरी मदद करो तथा दुष्टों, दोषियों से मुझे बचा लो।

गुरु पातशाह ने इस बाणी द्वारा कलयुगी जीवों का मार्गदर्शन किया है कि किस प्रकार विकारों एवं समय के दुष्ट हाकिमों से बचाव का एक मात्र उपाय है प्रभु की शरण में आ जाना, जैसा कि लोक-प्रचलित कहावत है:

जा को राखे साईयां, मार सके न कोय।
बाल न बांका कर सके, जा जग वैरी होय।

जो जीव सर्वशक्तिमान, सर्वकला-समर्थ प्रभु के दर पर अरदास बेनती करते हैं उनके समस्त दुष्ट, वैरी तत्क्षण नष्ट हो जाते हैं। जिसे इंसान किसी भी चतुराई, बाहूबल या धन-सम्पदा से प्राप्त करने में असमर्थ रहता है उसे सर्वकला-समर्थ प्रभु पल भर में मुमकिन कर देता है, जैसा कि पंचम पातशाह द्वारा उच्चारण की गई बाणी इसका पुख्ता प्रमाण है:

साचा साहिबु अमिति वडाई भगति वछल दइआला ॥
संता की पैज रखदा आइआ आदि बिरदु प्रतिपाला ॥२॥
हरि अंम्रित नामु भोजनु नित भुंचहु सरब वेला मुखि पावहु ॥
जरा मरा तापु सभु नाठा गुण गोबिंद नित गावहु ॥३॥

सुणी अरदासि सुआमी मेरै सरब कला बणि आई ॥
प्रगट भई सगले जुग अंतरि गुर नानक की वडिआई ॥४॥ *(पन्ना ६११)*

गुरु पातशाह ने अरदास बेनती करने की युक्ति बताकर कलयुगी जीवों पर कितना बड़ा उपकार किया है! जीव अपना लोक-परलोक सहजता से ही संवार सकता है। आवश्यकता है तो बस सतिगुरु की शरण में आकर उस परमेश्वर की एकाग्रचित्त हो बंदगी करने की।

स्वैया ॥

पांइ गहे जब ते तुमरे तब ते कोऊ आंख तरे नही आन्यो ॥

प्रस्तुत सवैये में गुरु पातशाह उस परमेश्वर को महाकाल रूप में सम्बोधित करते हुए फरमान करते हैं कि हे महाकाल जी! जब से मैं आपके चरण पड़ा हूं तब से मैं किसी दूसरे को सामने नहीं लाया हूं। मैं आपके चरणों का आसरा लेकर बेमोहताज हो गया हूं। एक प्रभु को छोड़ कर गुरु पातशाह किसी देवी-देवता को नहीं मानते।

राम रहीम पुरान कुरान अनेक कहैं मत एक न मान्यो ॥

विभिन्न धर्मों के अवतार, पैगंबर, पुरान तथा कुरान, हिन्दू और इस्लाम धर्म-ग्रंथ अपने-अपने अनेक मतों का प्रचार करते हैं, पर हे महाकाल जी! आपके आश्रय के होते हुए मैंने किसी और मत को नहीं अपनाया।

सिंम्रित सासत्र बेद सभै बहु भेद कहैं हम एक न जान्यो ॥

हिन्दू धर्म-ग्रंथ, स्मृतियां, शास्त्र और वेद आदि ये सब अपने मतों को अनेक तरह से वर्णन करते हैं, पर हे महाकाल जी! आपके सहारे के बिना कुछ भी मुझे अच्छा नहीं लगता।

श्री असिपान क्रिपा तुमरी करि मै न कह्यो सभ तोहि बखानयो ॥

हे शस्त्रधारी महाकाल जी! आप जी की स्तुति (यशोगान) तेरी ही रहमत से मुमकिन है। वह परमेश्वर जिस पात्र को इस योग्य समझता है उसी से सर्वश्रेष्ठ कर्म करवाता है।

दोहरा ॥

सगल दुआर कउ छाडि कै गहिओ तुहारो दुआर ॥
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार ॥

हे महाकाल जी! मैं समस्त द्वारों को त्याग कर तेरे द्वार आया हूं अर्थात् मैंने सभी सहारे छोड़ कर तेरा ही ओट-आसरा लिया है। बांह पकड़े हुए मुझ निमाणे की लाज तेरे ही हाथ है क्योंकि मैं आपका ही दास हूं। अपने सेवक पर सदैव अपनी कृपा-दृष्टि बनाये रखना जी।

रामकली महला ३ अनंदु
ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरू मै पाइआ ॥
सतिगुरु त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ ॥
राग रतन परवार परीआ सबद गावण आईआ ॥

'रामकली' राग में 'अनंदु' शीर्षक से रची हुई बाणी तीसरे पातशाह धंन धंन श्री गुरु अमरदास जी की है। 'रहरासि साहिब' के पाठ में '६ पउड़ियां अनंदु साहिब' का पाठ किया जाता है। इस बाणी में गुरु पातशाह ने सदा कायम रहने वाले आत्मिक आनंद का वर्णन किया है और उसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है, इसका सहज मार्ग दर्शाया है। गुरमति के अनुसार वास्तविक आनंद की प्राप्ति पूर्ण गुरु से ही होती है। सिक्ख मर्यादानुसार जीवन के हर खुशी या गम के अवसर पर भी एक सहज अवस्था में रहते हुए 'अनंदु साहिब' की बाणी का संक्षिप्त रूप ६ पउड़ियों का पाठ किया जाता है, उपरांत अरदास की जाती है।

ੴ (एक ओअंकार) अर्थात् एक अकाल

पुरख; सतिगुर प्रसादि--जिसे पूर्ण गुरु की कृपा से पाया अर्थात् जपा जा सकता है जिसके फलस्वरूप निरगुण, निराकार की सर्वव्यापकता का बोध हो जाता है।

श्री गुरु अमरदास जी जीव-आत्मा अथवा जीव-स्त्री की ओर से पावन फरमान करते हैं कि हे मेरी मां! मेरे हृदय-घर में आत्मिक आनंद आ गया है क्योंकि मुझे पूर्ण गुरु मिल गया है। पुर्ण गुरु की प्राप्ति के फलस्वरूप (अडोल) सदा स्थिर रहने वाली अवस्था भी प्राप्त हो गई है। मेरे मन में मानो खुशी के बाजे (अनहद नाद) बज रहे हैं। सुंदर राग अपने परिवार तथा रागनियों सहित मेरे हृदय-घर में मानो प्रभु की सच्ची स्तुति के गीत गाने आ पहुंचे हैं।

सतिगुरु को स्वाभाविक अवस्था में प्राप्त करके अर्थात् उस परमेश्वर की अपार बख्शिश से गुरु की प्राप्ति तथा पूर्ण गुरु की कृपा-दृष्टि से आनंद की प्राप्ति मुमकिन है। रत्नों जैसे अमोलक एवं सुंदर राग अपने परिवार सहित ईश-स्तुति करने हेतु मेरे मन-अंतर में आ बिराजे हैं।

सबदो त गावहु हरी केरा मनि जिनी वसाइआ ॥
कहै नानकु अनंदु होआ सतिगुरू मै पाइआ ॥१॥

हे भाई! आप भी ईश्वर की सिफत-सलाह के गीत गाओ। जिस किसी ने भी (गुरु-कृपा से) प्रभु-स्तुति एवं सिमरन का शबद मन में बसाया है उसके हृदय-घर में पूर्ण आनंद की अवस्था बन गई है। श्री गुरु अमरदास जी महाराज फरमान करते हैं कि मेरे अंदर भी आनंद की पावन अवस्था बन गई है, क्योंकि मुझे पूर्ण गुरु मिल गया है।

कविता

सच का सागर और बुद्धि की प्याली

आज या कल की बात नहीं है,
वर्षों पहले की है बात।
यूनान का रहने वाला दार्शनिक,
'आगस्टिन्स' था जिसका नाम।
कई रातों से सो नहीं पाया,
था बड़ा बेचैन, हताश।
ईश्वर को पाना चाहता था,
नहीं था होश, दिन है या रात।
इसी खोज में पहुंच गया वो,
सूर्योदय समय सागर के पास।
वहां पहुंच कर देखा एक बालक,
चिन्तित खड़ा ले प्याली हाथ।
आगस्टिन्स ने पूछा उससे,
क्यों बालक तुम हो उदास?
कारण बताओ अगर चिन्ता का,
तो खोजें कोई समाधान।
बालक बोला, पहले आप बताओ,
क्योंकि मुझसे ज्यादा चिन्तित आप।
शायद दोनों की चिन्ता एक हो,
फिर मिलकर ढूंढेंगे समाधान।
आगस्टिन्स बोले, "मैं हूं सत्य की खोज में।"
बालक बोला, "कहां है प्याली आपके पास?"
मैं तो इस प्याली में सागर को भरना चाहता हूं।
किस प्याली में भरेंगे सत्य का सागर आप?
आगिस्टन्स ने पल भर सोचा,
दिखाई दी उन्हें 'बुद्धि की प्याली' आज।
सत्य का सागर वह 'ईश्वर',
अहं की प्याली हम सबके पास।
जितनी बड़ी यह बुद्धि की प्याली,
उतनी बिगड़ी समझो बात।
'सच का सागर' उन्हें मिलता प्यारे,
बुद्धि की प्याली छोड़ने का जो करें साहस।

-डॉ मनजीत कौर, २/१०४, जवाहर नगर, जयपुर। मो: ०९३१४६-०९२९३

गुरु-गाथा : १८

न कोई हिन्दू न मुसलमान

*-डॉ. अमृत कौर**

सुलतानपुर लोधी में नवाब के दौलतखाने की परीक्षा के बाद श्री गुरु नानक देव जी 'तेरा तेरा' का रटन करते हुए समाधि में लीन हो गए। उनकी सुरति परमात्मा में जुड़ गई। वह अंतर्ध्यान हो गए। उन्हें लगा कि इस मोदीखाने की नौकरी से उठकर किसी महान कार्य के लिए उन्हें संसार में भेजा गया है, केवल इस नगर की सीमाओं में बंध कर वह नहीं रह सकते, आतुर दुखी जनों की आहें उन्हें पुकार रही हैं, उन्होंने सम्पूर्ण सृष्टि का उद्धार करना है। उन्होंने वेईं नदी में प्रवेश किया और तीन दिन समाधि में लीन रहे। समाधि के उपरांत वाहिगुरु ने नाम का प्याला गुरु जी के हाथों में पकड़ाया और कहा, "जा नानक, मेरा प्यार और नाम का संदेश संसार के कोने-कोने में पहुंचा दो। धर्म के नाम पर लड़ते-झगड़ते इन हिन्दू-मुस्लमानों के भेदभाव दूर करो। जात-पात के बंधन तोड़ दो।" समाधि के बाद गुरु जी ऊंचे स्वर में घोषणा करने लगे : *"न कोई हिन्दू न मुसलमान"*।

मुसलमान जोकि गुरु जी को मात्र एक साधारण हिन्दू के रूप में ले रहे थे उन्होंने उनके मुख से ये शब्द सुने। नवाब और काजी ने गुरु जी को निमंत्रण दिया यदि आप हिन्दू और मुसलमान में कोई अंतर नहीं समझते तो हमारे साथ मस्जिद में चलिए और नमाज पढ़िए। गुरु जी उनके साथ मस्जिद की ओर चल पड़े। काजी और नवाब दोनों कलमा पढ़ने लगे। गुरु जी भी नाम-सिमरन में मग्न हो गए, किसी आंतरिक समाधि में लीन, किसी अलौकिक मस्ती में मस्त। परन्तु जिस प्रकार नवाब और काजी ने कलमा पढ़ा, सजदा किया गुरु जी ने न उस प्रकार कलमा पढ़ा, न ही सजदा किया। नवाब और काजी शिकायत भरे लहजे में कहने लगे, "गुरु जी, आप तो कहते हैं कि हिन्दू और मुसलमान में कोई अंतर नहीं, पूजा और नमाज़ में कोई अंतर नहीं, परन्तु आप ने न नमाज़ पढ़ी और न ही सजदा किया।"

"वाह भाई वाह, नमाज़ तो तुम दोनों ने भी ढंग से नहीं पढ़ी। नवाब साहिब तो काबुल की मंडियों में घोड़े खरीद रहे थे और काजी का ध्यान घर में गऊ की ओर था कि उसका सारा दूध कहीं बछड़ा ही न पी जाए। सच्ची नमाज़ तो मन की एकाग्रता है, परमात्मा का नाम सिमरन है। यदि मन इधर-उधर भटक रहा है और आप मुख से नमाज़ पढ़ रहे हैं तो यह सच्ची नमाज़ नहीं है और ऐसी नमाज़ दरगाह में प्रवान नहीं होती।"

नवाब और काजी यह सच्चाई सुनकर निरुत्तर हो गए। उनकी आंखें शर्म से झुक गई। गुरु जी ने उन्हें समझाते हुए कहा, "सच्ची नमाज़ तो दिल से पढ़ी जाती है। प्रभु का सिमरन तो श्वास-श्वास उठते-बैठते किया जा सकता है। उसके लिए किसी विशेष समय और स्थान की आवश्यकता नहीं है। यह सम्पूर्ण संसार प्रभु का घर है। इसलिए प्रभु की बंदगी के लिए किसी विशेष स्थान की आवश्यकता नहीं"। 'आसा की वार' में गुरु जी इस उपलक्षय में फरमान अंकित है :

इहु जगु सचै की है कोठड़ी सचे का विचि

*१५४, ट्रिब्यून कालोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०३

वासु ॥ *(पन्ना ४६३)*

गुरु जी ने और कहा कि रही नमाज़ की, कलमा पढ़ने की बात परमात्मा एक है और उसको हम विभिन्न नामों से पुकार सकते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पंचम गुरु जी का भी पावन बचन है :

कोई बोलै राम राम कोई खुदाइ ॥
कोई सेवै गुसईआ कोई अलाहि ॥ (पन्ना ८८५)

"विभिन्न धर्मों के पूजा के शबद अलग हो सकते हैं। उनके धार्मिक ग्रंथ अलग हो सकते हैं। हिन्दू गीता और रामायण पढ़ सकते हैं। मुसलमान कुरान पढ़ सकते हैं। ये सम्पूर्ण धार्मिक पुस्तकें परमात्मा को याद करने का मार्ग बतलाते हैं। कोई भी धर्म बुरा नहीं। सब महापुरुष महान हैं। वे सम्पूर्ण मानवता की भलाई और कल्याण के लिए कार्य करते हैं, सेवा और परोपकार का मार्ग बतलाते हैं।" पावन निर्मल वाक्य है :

परथाइ साखी महा पुरख बोलदे सांझी सगल जहानै ॥ *(पन्ना ६४७)*

"अत: धार्मिक वैमनस्य को छोड़कर प्यार से एक-दूसरे के साथ रहना सीखो। यही सच्चा धर्म है। यही सच्ची बंदगी है।"

//कविता//

जिनके पुत्र हैं परदेस

पुत्र कहे, कैनेडा जाना!
हमारा बने वहां ठिकाना!
खेत बेचकर, बसें बनाएं!
कोठी 'ताज महल' बनाएं!
बापू! न खा दिल को चोट।
दिल में अपने न कोई खोट।
काम न करना, खुशी मनाना!
घूम-फिर कर दिल बहलाना!
उड़ गए बेटे कैनेडा बल्ले!
गांव में हो गई बल्ले-बल्ले!
हर कोई हम को दे बाधाई।
किस्मत तुमरी रंग है लाई!
जल्दी ही सैट हो जाएंगे!
तुमको पैसे भिजवाएंगे।
बने वे जब, कैनेडा वासी।
अपना बन गया चक्र चौरासी।
पैसा कोई भी न भिजवाया।
कहते रहे, न वहां बुलाया।
चेहरों पर उदासी छाई।
हंसी कभी न हमको आई।
चेहरे पर न, खुशी का नूर।
हृदय तपता ज्यों तंदूर।
करें फोन तो काटने लगते।
कई तरह से डांटने लगते।
क्यों न वृद्धो, चैन हो लेते?
तंग हमको हो करते रहते!
हमारी खातिर क्या है किया?
खून हमारा ही है पीया।
सोचों में अब रहें वे खोये।
सोचा क्या था और क्या होये?
अकेलापन हम दोनों झेलें।
बूढ़ा-बूढ़ी रहें अकेले।
स्वयं ही लाएं, स्वयं पकाएं।
थक-टूट कर रोटी खाएं।
वृद्ध-आश्रम अब, पड़ेगा जाना!
वही हमारा ठीक ठिकाना!
'क्यों दोनों पुत्र हुए कपुत्र?'
किससे मांगें इसका उत्तर?
जिनके पुत्र हैं परदेस।
माता-पिता हैं बीच कलेश।
किसको दिल का हाल सुनायें?
चलो 'भौर' को व्यथा बतायें!
अपने देश में थोड़ी खाओ!
बाहर का चक्र नहीं चलाओ!

-कवीशर स्वर्ण सिंघ भौर, गांव और डाक सरली कलां, जिला तरनतारन। मो: ९४१७८-५३६९३

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-२९

विद्वान पिता का विद्वान पुत्र - कवि भाई नंद राम

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

दशमेश पिता साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवियों में एक प्रमुख नाम भाई नंद राम कवि का है। कवि भाई नंद राम को साहित्यिक परंपरा वाले परिवार में जन्म मिला। इनके पिता प्रसिद्ध सूफी संत एवं कवि श्री वली राम थे। आपके कुटुंब की प्रसिद्धि अंबावती के खंडेलवाल वैश्यों के रूप में थी। पिता श्री वली राम दारा शिकोह के मुंशी और उर्दू, रेख्ता, फारसी, हिंदी, पंजाबी के विद्वान थे। 'झूलणे', 'जान सुजानी', 'विचार सरोवर', 'बिबेक कली', 'चिद बिलास', 'वेदांत सागर' तथा 'राजावली' आदि जैसी कृतियां रचने वाले विद्वान कवि श्री वली राम के घर में जन्म लेने वाले और परवरिश पाने वाले भाई नंद राम भी बड़े होकर उच्च कोटि के विद्वान एवं श्रेष्ठ कवि बन कर उभरे।

पिता श्री वली राम गुरु-घर के बड़े ही श्रद्धालु थे। संभवत: इसी कारण कवि भाई नंद राम दशमेश पिता के दरबार में आये और गुरु जी के दरबारी कवियों में से एक बने। कई सिक्ख ऐतिहासिक स्रोतों में इन्हें 'भाई नंद सिंघ' लिखा गया है। लगता है कि कवि भाई नंद राम ने बाद में 'अमृत' छक लिया था और 'सिंघ' सज कर भाई नंद सिंघ बन गये थे।

कवि भाई नंद राम की दो प्रमुख रचनाएं उपलब्ध हैं। पहली रचना संवत् १७४४ वि. (सन् १६८७ ई) की 'नंदराम पचीसी' है, जिसमें कलयुग की दशा का वर्णन किया गया है। दूसरी रचना 'कड़खा गुरु गोबिंद सिंघ' है जिसमें गुरु जी द्वारा लड़े गये भंगाणी से चमकौर तक के समस्त युद्धों का सुंदर वर्णन किया गया है। सारी कृति वीर रसात्मक है और गुरु साहिब के योद्धा रूप का श्रेष्ठ चित्रण किया गया है :

शकति भगवंत की आपि भाई दाहणै,
जबहि गोबिंद सिंघ अवतार साजा।
धयाइ स्री भगवती तेग कर मैं गही,
उठिओ बल धारि जिम सिंघ गाजा।

भाई नंद राम ने युद्धों के वर्णन का भी बड़ा सजीव चित्रण किया है :

मचयो तब जुध अति करुध सूरे चढ़े,
भेड़ अति प्रबल तब होण लागयो।
जंग तब ही लरिओ कोप मारू बजिओ,
सौर को सुरति शिव चमक जागयो।

इसी प्रकार आप ने चमकौर की जंग में साहिबजादा अजीत सिंघ जी की बहादुरी का भी वास्तविक अंकन किया है :

आणि तब खेत मै मारि लहै मची,
एकसै दोइ धड़ जुदा कीआ।
भगे पठाण अवसाण तजि खेत मो,
तजयौ संग्राम ले भगे जीआ।
कहैं पठाण यह पुत्र है गुरु को,
जुध को जीत जस तिलक लीआ।
नाम अजीत सिंघ जीत रण मैं करी,
बोल आपनो सही अमरु कीआ।

भाई नंद राम के हृदय में दशमेश पिता के प्रति बड़ी श्रद्धा और प्रीति थी। अपने पंजाबी भाषा में लिखे छंद में आप कहते हैं :

जिस दिन यार विछोड़ा तेरा,

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना) पंजाब। मो: ०९४१७२-७६२७१*

सो दिन अजलों भारी।
पल पल विच विछोड़ा कुंहदा,
अजल कुहे इक वारी।
आगे आहीं दरदां दधी,
उतों इशक तुहाडे साड़ी।
नंद राम इक पलक विछोड़ा,
उमर वंझावे सारी।

इस प्रकार महान कवि-विद्वान श्री वली राम के पुत्र भाई नंद राम ने अपने पिता की विरासत को न सिर्फ आगे बढ़ाया बल्कि दशमेश पिता के दरबार में हाजरी भर कर पिता की गुरु-घर के प्रति श्रद्धा को उसके चरम बिंदु तक भी पहुंचाया।

कविता

अंधकार में आशा की किरण

तार-तार रंग है हरा, श्वेत हो गया श्याम।
केशरिया को दल रहा, स्वार्थ चक्र अविराम।
सूख रहा गण दिनो दिन, रहा फूल-फल तंत्र।
बन विडंबना रह गया, भारत में गणतंत्र।
नीति-धर्म की लाश पर, स्वार्थ-प्रेत का मंत्र।
सिद्ध कर रहा बैठकर, भारतीय गणतंत्र।
जन-जन भाषा तज जपे, तंत्र विदेशी मंत्र।
जुड़ न सके गण-तंत्र तो, फिर कैसा गणतंत्र?
मोती तज घोंघे चुगे, पिए नीर तज क्षीर।
अब बक-सेवक हंस की, यही हुई तकदीर।
नेता-अफसर पाट दो, चक्की है यह तंत्र।
जन-गण गेहूं-सा पिसे, यही आज गणतंत्र।
गण की मति-गति-नीति के, बने नियामक यंत्र।
स्वेच्छाचार स्वतंत्रता, भीड़तंत्र गणतंत्र।
जन-जन में गण बंट गया, कुर्सी-कुर्सी तंत्र।
कर्त्तव्यों की बलि करें, अधिकारों के मंत्र।
छाया-सुमन-सुवासमय, सफल रसाल उखाड़,
इस गणतंत्री बाग में, लगे कैक्टसी झाड़।
अब अलगावों की ढहे, हत्यारी दीवार।
जन-जन-मन मिल 'गण' बने, जुड़ें तंत्र के तार।
रही आस की तनु किरण, शून्य क्षितिज को चूम।
आएगी इस विपिन में, फिर बसंत ऋतु झूम।
युवा शक्ति पर राष्ट्र के, योग-क्षेम का भार।
उससे ही गणतंत्र का, होगा फिर उद्धार।

-डॉ. दादूराम शर्मा, महाराज बाग, भैरवगंज, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१

ख़बरनामा

केंद्र सरकार 'अनंद मैरिज एक्ट' तुरंत लागू करे : जत्थेदार अवतार सिंघ

फतेहगढ़ साहिब : १५ दिसंबर। सिक्ख धर्म की आस्था तथा धार्मिक भावनाओं का सत्कार करते हुए १९०८ में समय की अंग्रेज सरकार द्वारा 'अनंद मैरिज एक्ट' को स्वीकृति दी गई थी। इसके बावजूद भी आजाद भारत में अल्पसंख्यक सिक्खों के सिद्धांतों तथा विलक्षण अस्तित्व को नजरंदाज करते हुए 'अनंद मैरिज एक्ट' १९०८ को लागू नहीं किया गया है और आज तक सिक्खों के विवाह 'हिंदू मैरिज एक्ट' के अनुसार ही रजिस्टर्ड किए जा रहे हैं। भारत की केंद्र सरकार को सिक्खों की विलक्षण होंद-हस्ती, न्यारेपन एवं धार्मिक भावनाओं को मुख्य रखते हुए तुरंत 'अनंद मैरिज एक्ट' को इसकी सही स्प्रिट में लागू करना चाहिए।

गुरुद्वारा श्री फतेहगढ़ साहिब में शिरोमणि गु: प्र: कमेटी की कार्यकारणी की एकत्रता के बाद पत्रकारों को सम्बोधित करते हुए जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि 'अनंद मैरिज एक्ट' को अमल में लाने के लिए सिक्ख जत्थेबंदियों के सहयोग से कानूनी चाराजोई तथा सरकार के पास पहुंच करने का निर्णय लिया गया है। उन्होंने बताया कि आज की एकत्रता में पाकिस्तान में सिक्ख वकील स. अनूप सिंघ पर कहर ढाने तथा उनके केशों का अपमान किए जाने की जोरदार निंदा का प्रस्ताव पारित करते हुए पाकिस्तान सरकार को पाकिस्तान में अल्पसंख्यक सिक्खों की जान-माल की सुरक्षा विश्वसनीय बनाए जाने की मांग की है। उन्होंने आगे बताया कि १९८४ में देश के विभिन्न शहरों में हुए सिक्ख कत्लेआम के समय यात्रा के दौरान शहीद हुए लगभग २० फौजी परिवारों को एक-एक लाख रुपए की सहायता दिए जाने तथा १९८४ के घल्लूघारे के दौरान तथा अलग-अलग पुलिस मुकाबलों में बीबी गुरजीत कौर के चार सदस्य शहीद हुए थे, उनके द्वारा पहुंची सहायता की मांग प्रवान करते हुए उनकी एक लाख रुपए देकर मदद की जाएगी।

सियालकोट (पाकिस्तान) स्थित गुरुद्वारा साहिब की इमारत ध्वस्त करने (ढाने) की कारवाई ततकाल बंद की जाए - जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर : १७ दिसंबर। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान जत्थेदार अवतार सिंघ ने सियालकोट शहर (पाकिस्तान) में गुरुद्वारा साहिब की इमारत ध्वस्त करने संबंधी पहुंची सूचना का सख्त नोटिस लेते हुए इसको सिक्खों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुंचाने वाली दुर्भाग्यपूर्ण कारवाई ठहराते हुए केंद्र सरकार से मांग की है कि ततकाल इस कारवाई को बंद कराये और इस इमारत को पहली स्थिति में बहाल किये जाने के लिए पाकिस्तान सरकार पर बल दे।

उन्होंने कहा कि १९४७ में हुए देश के

विभाजन के समय सिक्ख धर्म के साथ संबंधित बड़ी संख्या में गुरुद्वारा साहिबान पाकिस्तान में और मुसलमान भाईचारे की जायदादें तथा उनके पवित्र स्थान भारत में रह गए थे। विभाजन के उपरांत इन गुरधामों की सांभ-संभाल और उनके संबंधित संपतियों को खुर्द-बुर्द होने से बचाने के लिए उस समय के भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्रियों पंडित जवाहर लाल नेहरू और जनाब लियाकत अली के बीच हुए समझौते के अनुसार यह जिम्मेवारी दोनों देशों की सरकारों की बनती है कि वे अपने मुलकों में हरेक धर्म के स्थान की पवित्रता और संपत्ति की रक्षा करे।

परंतु बहुत खेद की बात है कि पाकिस्तान में स्थित गुरधामों से संबंधित जमीन-जायदादों की संभाल के प्रति सरकार की तरफ से अनदेखी की जा रही है, जिसके परिणामस्वरूप सियालकोट शहर के गेहूं मंडी उपक्षेत्र में स्थित गुरुद्वारा साहिब की इमारत ध्वस्त किये जाने के ताजा समाचार के साथ सिक्ख हृदयों को भारी आघात पहुंचा है और संगतों में रोष तथा गुस्सा पाया जा रहा है। उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री को पत्र लिख कर मांग की है कि उक्त गुरुद्वारा साहिब को ध्वस्त किये जाने की कारवाई ततकाल ही रोकने और गुरुद्वारा साहिब की इमारत को पुन: पूर्बली स्थिति में बहाल किये जाने के लिए पाकिस्तान सरकार पर बल डाले इसलिए कि सिक्ख संगतों के हृदय शांत हो सकें और दूर-रसी तथा गंभीर परिणामों से बचा जा सके ताकि दोनों देशों तथा देशों के अवाम में परस्पर सद्भावना तथा प्रेम बना रह सके।

नवंबर १९८४ में दिल्ली में हुए सिक्ख कत्लेआम से पीड़ित परिवारों की कानूनी सहायता की निशानदेही के लिए कमेटी गठित

अमृतसर : २४ दिसंबर। नवंबर १९८४ में दिल्ली में हुए सिक्ख कत्लेआम से पीड़ित परिवारों की शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा कानूनी सहायता के लिए पांच सदस्यों पर आधारित कमेटी गठित की गई है जो ऐसे जरूरतमंद परिवारों की सहायता के लिए शिरोमणि कमेटी को शिफारिश करेगी। इन विचारों को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान जत्थेदार अवतार सिंघ ने यहां से जारी एक प्रेस रिलीज में व्यक्त करते हुए कहा कि जत्थेदार अवतार सिंघ हित्त, स. कुलदीप सिंघ (भोगल) मैंबर शिरोमणि कमेटी, स. मनजीत सिंघ जी. के., स. ओंकार सिंघ (थापर) और स. मनजिंदर सिंघ सिरसा पर आधारित इस पांच सदस्यों पर आधारित कमेटी द्वारा नवंबर १९८४ में हुए सिक्ख कत्लेआम से पीड़ित ऐसे जरूरतमंद परिवारों के केसों में कानूनी या उनके बच्चों की पढ़ाई आदि के लिए सहायता संबंधी शिरोमणि कमेटी को की गई सिफारिश के आधार पर इन परिवारों की सहायता की जाएगी।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०२-२०१०